मार्च
2025

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 89 अंक - 3 । प्रति - ₹ 25 । ₹ 300 वार्षिक

7 रोपै पेड़ बबूल का, आम कहाँ से होय

17 जहाँ सुमति तहँ संपति नाना

33 वासना से नहीं, साधना से मिलता है संतोष

45 देव-डोलियों से दीप्त हुआ देव संस्कृति विश्वविद्यालय

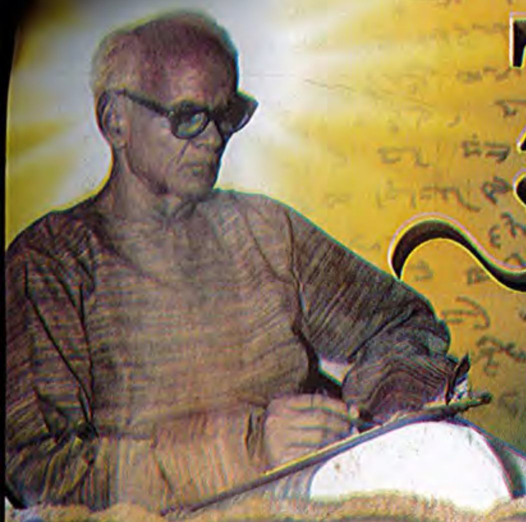

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

मृत्यु से डरने की कोई आवश्यकता नहीं

विनाशात्मक परिस्थितियाँ हरेक के जीवन में आती रहती हैं; क्योंकि वे आवश्यक, स्वाभाविक सृष्टिक्रम के अनुकूल एवं अनिवार्य हैं। परंतु लोग उनसे बुरी तरह डरते हैं। विपत्ति आने पर तो डरते ही हैं, पर अनेक बार विपत्ति की आशंका, संभावना, कल्पना मात्र से भयभीत होते रहते हैं और इस प्रकार जीवन का अधिकांश भाग भय, चिंता, आशंका, घबराहट और दुःख में व्यतीत होता है। यहाँ पर यह आश्चर्य होता है कि विनाश जब जीवन का एक स्वाभाविक व अनिवार्य अंग है तो लोग उससे इस प्रकार डरते क्यों हैं? धनी और निर्धन, संपन्न और असंपन्न सभी का जीवन असंतोष, अतृप्ति, खिन्नता, हीनता, निराशा आदि से भरा रहता है। पूर्ण सुखी मनुष्य ढूँढ़ निकालना आज असंभव नहीं तो कष्टसाध्य अवश्य है।

विघटनात्मक, विनाशात्मक स्थितियों से डरने-घबराने का कारण मनुष्य की एक आध्यात्मिक भूल है। वह भूल यह है कि वह शरीर को ही 'मैं' मान बैठता है, अपने आप को शरीर समझने के फलस्वरूप आत्मलाभ, आत्मानंद, आत्मरक्षा, आत्मपरायणता, आत्म-प्रतिष्ठा जैसी वृत्तियाँ दूसरे ही रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। उनका स्वरूप शरीर-लाभ, शारीरिक आनंद, शरीर-रक्षा, शरीर-परायणता, शरीर-प्रतिष्ठा बन जाता है। चूँकि आत्मलाभ अंतःकरण का ईश्वरप्रदत्त गुण है, इस ओर जीव की स्वाभाविक रुचि होती है, इसी में उसे आनंद आता है और इसमें विक्षेप पड़ने से दुःख होता है। संत, महात्मा, ब्रह्मवेत्ता ऋषि, मुनि, सज्जन, लोकसेवक, सत्पुरुष इसी मार्ग पर चलते हैं और जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करते हुए सदा आनंद निमग्न रहते हैं। परंतु जब आत्मलाभ की परिभाषा शरीर लाभ हो जाती है, जब आत्मरक्षा का तात्पर्य शरीर रक्षा समझा जाता है तो बड़ी अज्ञान संभव परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिसमें आज जनसाधारण ग्रस्त हो रहा है।

मार्च – 1950 (पृष्ठ-5)

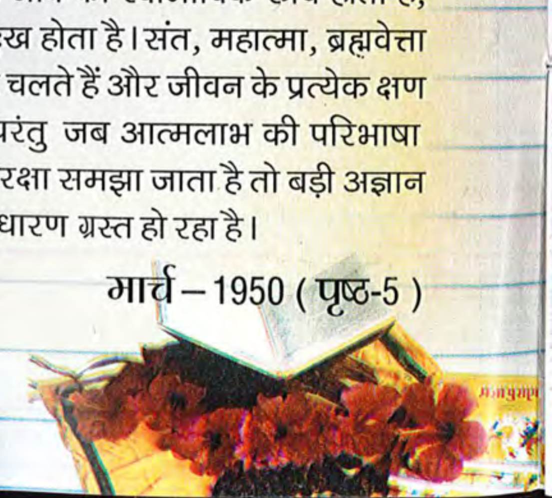

संस्थापक-संरक्षक

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

एवं

शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा

संपादक

डॉ० प्रणव पण्ड्या

कार्यालय

बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)

दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449 2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291, 7534812036 7534812037, 7534812038, 7534812039

समय—प्रात: 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।

नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	89
अंक	:	03
मार्च	:	2025
फाल्गुन-चैत्र	:	2081-82
प्रकाशन तिथि	:	01.02.2025

वार्षिक चंदा

भारत में सामान्य डाक से	:	300/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से	:	540/-
विदेश में	:	2800/-

आजीवन (बीसवर्षीय)

भारत में सामान्य डाक से : 6000/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से (वार्षिक) : +240/-

क्रमश : हिमालय के हिमशिखरों में

हिमालय के हिमशिखरों में साधना के सनातन रहस्य हैं। इसका परिचय केवल पर्वतशिखरों पर जमा हुआ हिम नहीं है। यह भारत देश की भारतीय संस्कृति का भव्य भाल है। यह स्वयं देवात्मा है, जो न जाने कितनी दिव्यात्माओं को अनायास अपनी ओर आकर्षित करता रहता है। बीते युगों से लेकर अब तक इसकी गिरि-गुफाओं के गर्भ में अनगिनत असंख्य ऋषियों, संतों, तपस्वियों, महात्माओं की तप-साधना पोषित हुई है। इसकी गुफाओं के गर्भ से जन्म पाने वाली साधना के बल पर साधारण-से-असाधारण बनने वालों की संख्या असंख्य है।

हमारे युगदेवता को अपने बचपन से हिमालय प्रिय था। यह उनकी अंतरात्मा में बसा था। उनके लिए यह आकर्षक एवं सम्मोहक था। इसीलिए वे अपने बचपन में अकेले ही हिमालय की ओर चल पड़े थे। तब उनके घर के परिजन-स्वजन उन्हें जबरन अपने साथ वापस लिवा लाए थे, लेकिन अब जब साधना सिद्ध होने लगी, पुरश्चरणों का परिपाक होने लगा; तब उन्हें हिमालय के हिमशिखरों ने स्वत: आमंत्रित किया।

साधना की सघनता में, ध्यान की गहनता में उनके हृदय में—महान गुरु के संकेत-स्वर उभरे। उनकी अपनी भाषा में हृदय में बेतार-का-तार मिला। सारे साधन स्वयं जुट गए और वे हिमालय के हिमशिखरों में पहुँच गए। यहाँ उन्हें कई सहस्र वर्षों से तप कर रहे दिव्य ऋषियों के दर्शन हुए, मार्गदर्शन मिला। वहाँ से जब वे वापस लौटे, तब हिमालय के आँगन में युगों से तपनिरत ऋषियों के प्रतिनिधि के रूप में वे युगऋषि थे। ऋषि जीवन और ऋषि कर्म उनमें प्रकाशित हो उठा। ❐

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विषय सूची

- आवरण—1 1
- आवरण—2 2
- हिमालय के हिमशिखरों में 3
- **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
  नशे की समस्या एवं इसका निदान 5
- रोपै पेड़ बबूल का, आम कहाँ से होय 7
- ईश्वर की अनुभूति का विधान 10
- महानता का पथ 13
- आत्मकल्याण का साधन है निष्काम सेवा 15
- जहाँ सुमति तहँ संपति नाना 17
- **पर्व विशेष—होली पर्व**
  जीवन-यज्ञ का पर्व होली 20
- शिकायत न करें, धन्यवाद दें 23
- अद्भुत क्रांतिकारी : वीर सावरकर 25
- अकेले चलने का साहस करें 27
- विदेह होने की यात्रा 28
- डॉल्फिनों का रोचक संसार 31
- वासना से नहीं, साधना से मिलता है संतोष 33
- सफलता प्राप्ति का राजमार्ग 35
- **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—30**
  गायत्री यज्ञ और सामाजिक क्रांति 37
- **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—191**
  मीडिया प्रबंधन की भूमिका 39
- **युगगीता—298**
  कर्मफल के त्यागी को प्राप्त होती है
  कर्मफल परिणाम से मुक्ति 43
- **विश्वविद्यालय परिसर से—237**
  देव-डोलियों से दीप्त हुआ
  देव संस्कृति विश्वविद्यालय 45
- **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
  समझदारों की नासमझी (उत्तरार्द्ध) 53
- **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
  विषाक्तता का विनाश 60
- **अपनों से अपनी बात**
  अखण्ड ज्योति के सच्चे उत्तराधिकारी बनें 63
- होली आई रे (कविता) 66
- आवरण—3 67
- आवरण—4 68

आवरण पृष्ठ परिचय

भारतीय संस्कृति का विलक्षण पर्व होली

मार्च -अप्रैल, 2025 के पर्व-त्योहार

शनिवार	01 मार्च	रामकृष्ण परमहंस जयंती/ फुलरिया दूज	सोमवार	31 मार्च	गणगौर
शुक्रवार	07 मार्च	होलाष्टक	रविवार	06 अप्रैल	श्रीराम नवमी
सोमवार	10 मार्च	आमलकी एकादशी	मंगलवार	08 अप्रैल	कामदा एकादशी
गुरुवार	13 मार्च	होलिका दहन/पूर्णिमा	गुरुवार	10 अप्रैल	महावीर स्वामी जयंती
शुक्रवार	14 मार्च	होली धूलिवंदन	शनिवार	12 अप्रैल	हनुमान जयंती
शुक्रवार	21 मार्च	शीतला सप्तमी	रविवार	13 अप्रैल	वैशाखी
मंगलवार	25 मार्च	पापमोचनी एकादशी 'स्मा.'	सोमवार	14 अप्रैल	आंबेडकर जयंती
बुधवार	26 मार्च	पापमोचनी एकादशी 'वै.'	गुरुवार	24 अप्रैल	वरूथिनी एकादशी
रविवार	30 मार्च	नवसंवत्सरारंभ/ चैत्र नवरात्र आरंभ	मंगलवार	29 अप्रैल	परशुराम जयंती
			बुधवार	30 अप्रैल	अक्षय तृतीया

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को

Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Rishi Chintan

विशिष्ट सामयिक चिंतन

नशे की समस्या एवं इसका निदान

कोई भी नशा करने वाला व्यक्ति सबसे पहले एक मनोरोगी होता है, इसलिए चिकित्सा मन के तल से शुरू की जानी चाहिए। यह गंभीर विषय है, परंतु अधिकांश लोग नशे को बाह्य उपचारों से ही ठीक करने का प्रयास करते हैं।

नशा एक महामारी है, जिसने समूचे समाज को अपनी जकड़ में ले लिया है कोई तनाव मिटाने के लिए ऐसा करता है तो किसी को इसमें विशेष रस आता है। कारण जो भी हो, परंतु इसी के प्रकोप से प्रतिवर्ष असंख्यों जीवन नरकतुल्य यातनाओं से गुजरते हैं तथा उन्हें सँभलने का अवसर नहीं मिल पाता।

ऐसा इसलिए; क्योंकि नशा उनकी मानसिकता में प्रवेश कर जाता है, वे समझते हैं कि इसके बिना उनका गुजारा नहीं चल सकता है। उनकी यही दुर्दशा उन्हें एक दिन मृत्यु के सम्मुख ला खड़ा करती है एवं तब उनके पास पछताने का भी समय शेष नहीं रहता।

यही है नशे की वह छवि, जिसे हम अपने समाज में एक व्यापक रूप लेता देख सकते हैं। इसके अंतर्गत हर वर्ग के लोग आ जाते हैं, कोई किसी भी पृष्ठभूमि का हो नशे ने सबको खा डाला। अब हम इससे कैसे बचें ? एक ही उपाय है, वह है नशे की जड़ को मिटा देना।

जिस दिन मनुष्य यह सीख जाएगा कि उसका जीवन अल्प है तथा इस प्रकार बरबाद करने के लिए नहीं, उसकी चेतना स्वयं ही उसे धिक्कारेगी। कहेगी कि तूने मेरी दी हुई संपदा का क्या किया, यह शरीर ईश्वर की दी हुई प्रतिकृति है। इसके द्वारा मनुष्य क्या नहीं कर सकता है, परंतु उसने इसे उन प्रयोजनों में जाने दिया, जिनसे उसको कुछ लाभ नहीं होने वाला।

नशा हमारी जड़ता का प्रतिचिह्न है। जिस समाज में जितने नशेड़ी होते हैं, वह उतना ही खोखला होता जाता है। घर-परिवार तो नष्ट होते ही हैं साथ में व्यक्ति का आत्मसम्मान भी इतना नीचे गिर जाता है कि वह फिर उठ नहीं पाता। हमारा जीवन किसी मूल्य का नहीं रह जाता यदि हमने नशे का वरण कर उससे अपने चरित्र की हानि एवं अपने समाज के पतन की दिशा में कदम बढ़ाए।

यह नशे का परिणाम ही है कि आज मनुष्य अधिक अकेला अनुभव करता है। उसे लगता है कोई उसके साथ नहीं; जबकि उसका जीवन स्वयं के बनाए जाल में ही उलझा रहता है। ऐसा व्यक्ति चाहकर भी अपने को सुधार नहीं सकता है; क्योंकि उसकी आत्मा सोई हुई है।

आप उन्हें दवाएँ दीजिए, हर प्रकार के चिकित्सा-प्रयोग का सहारा लीजिए तथा कितना भी उन्हें सुझाव-मार्गदर्शन प्रदान करें वे तभी सुधरेंगे, जब उनके भीतर कुछ विशेष घटित होता हो। मनुष्य की प्रतिभा अपने जीवनोद्‍देश्य की पूर्ति में तभी लगती है, जब वह अपने भीतर की दिव्य भावना को उजागर करना सीख ले।

यही आत्मपरिवर्तन है। नशे को इससे जोड़ कर हम इस भ्रम को दूर करना चाहते हैं कि नशे का संबंध हमारी बाह्य परिस्थिति से है। यह तो आता ही हमारे मूल अज्ञान से है, अपने स्वरूप के प्रति अनभिज्ञ बने रहना, इस संसार की बातों के मध्य

स्वयं को एकनिष्ठ न रख पाना तथा जीवन को व्यर्थ के प्रयोजनों में ही रमाए रखना।

जब हम इस सत्य के प्रति जाग जाएँगे कि हमें यह जीवन अपनी आत्मा के कल्याण के लिए मिला है तथा इसका प्रत्येक क्षण लघु से महान होने में ही व्यतीत किया जाना चाहिए, वैसे ही हमारे अंतर्नेत्र खुलकर हमें यह दिशाबोध कराएँगे कि हम किस प्रकार जिएँ।

पदार्थ का सुख हमें नहीं चाहिए, तृष्णाओं के पीछे भागना हमारी आत्मा को स्वीकार नहीं तथा कुछ भी ऐसा जो हमें भटकाए त्याज्य है। इसी परिप्रेक्ष्य में हम यह समझें कि नशा एक व्याधि है, जिसे मनुष्य के मन ने इसलिए ओढ़ रखा है; क्योंकि उसके पास कोई विकल्प नहीं।

यदि हम सच में जाग सकें तो देखेंगे कि यह कितनी तुच्छ चीज है, इसके कारण कितने उपद्रव खड़े होते हैं, हमारा जीवन इसी के भरण-पोषण में लग जाता है। आज नहीं तो कल हमें इसके दुष्प्रभाव से मुक्त होना ही होगा।

यह समाज तभी ऐसा कर सकेगा, जब उसे अपनी मूल धरोहर का ज्ञान हो। नशा मनुष्य की पाशविक प्रवृत्ति को उभारता है तथा उसका वातावरण इसमें अपनी भूमिका निभाता है।

यदि इसे समाप्त करना है तो सर्वप्रथम हमें बौद्धिक स्तर पर कार्य करना होगा। वह है मन:संस्थान की शुद्धि तथा उसके द्वारा जीवन के नवनिर्माण का संकल्प।

जो मनुष्य अपने भीतर की प्रेरणा से परिचित होते हैं, उन्हें संसार डिगा नहीं पाता। यदि हम अपने आप को विषय-बंधनों से परे देखना सीख जाएँ तो स्वत: ही हमारे जीवन का सुधार होता जाएगा। नशे के साथ भी हमें यही नीति अपनानी चाहिए। ❑

सृष्टि को मैं सुंदर बनाऊँगा, संसार को मैं सुवास दूँगा, जिससे जन-जन का मन पुलकित हो उठे—एक नन्हा-सा बीज धरती की गोद में अपने इस शिव संकल्प के साथ करवटें बदल रहा था। प्रकृति ने उसके संकल्प की परीक्षा लेने की सोची।

धरती ने उस पर अपना भार बढ़ाया, पर तभी कहीं से उस बीज को जल की एक बूँद आ मिली। बीज फूट पड़ा और अंकुर में बदल गया। धीरे-धीरे उस अंकुर में से एक तना निकला। उस तने की परीक्षा लेने के लिए वायुदेव ने भयंकर आँधी का उपक्रम किया, जिसमें बड़े-बड़े वृक्ष धराशायी हो गए, पर वह पौधा विनम्रता के साथ इधर-उधर झुकता रहा और आँधी उसका कुछ बिगाड़ न सकी।

इस बार उसका सामना उपवन में फैली खरपतवार से हुआ। उसने उसे चारों ओर से घेर लिया, पर माली को उस पौधे का संकल्प मुग्ध कर गया। उसने पौधे के चारों ओर फैली झाड़ियाँ काट दीं।

वह पौधा संकल्प के साथ आगे बढ़ता हुआ वृक्ष बन गया। विधाता ने प्रकृति को समझाते हुए कहा—''देवी! जो बीज की भाँति स्वयं को गलाना जानता है, बाधाओं से टकराना जानता है, प्रतिघातों से जो उत्तेजित और विचलित नहीं होता है, तितिक्षा से जो कतराता नहीं—उसी का जीवन सुरभित, प्रस्फुटित और विकसित होता है।''

रोपै पेड़ बबूल का, आम कहाँ से होय

भारतीय संस्कृति कर्मफल में विश्वास करती है। हमारे अच्छे-बुरे कर्मों का फल हमें कभी-न-कभी अवश्य मिलता है। यही कर्मफल का अकाट्य सिद्धांत है। खेत में वही फसल उगती और उपजती है, जिस फसल का बीज हम खेत में बोते हैं। उसी प्रकार हम जीवन में जो भी और जैसे भी कर्म करते हैं, हमें वैसा ही फल प्राप्त होता है। बुरे कर्म करने पर हमें फल के रूप में दुःख ही मिलता है और अच्छे कर्म करने पर हमें सुख ही मिलता है।

कर्मफल को लेकर संत कबीर ने कितना सटीक कहा है—

काया खेत किसान मन, पाप पुण्य दो बीज।
बोया लूनै आपना, काया कसकै जीव॥
करे बुराई सुख चहै, कैसे पावै कोय।
रोपै पेड़ बबूल का, आम कहाँ से होय॥
जहँ यह जियरा पगु धरे, बरवत बराबर साथ।
जो है लिखा नसीब में, चलै न अविचल बात॥
बाहिर सुख-दुःख देन को, हुकुम करै मन मांय।
जब उठै मन बखत, बाहिर रूप धरि आय॥
दुःख लेने जावै नहीं, आवै आचाबूच।
सुख का पहरा होयगा, दुःख करेगा कूच॥
तेरा बैरी कोय नहीं, तेरा बैरी फैल।
अपने फैल मिटाय ले, गली-गली कर सैल॥

अर्थात शरीर खेत है, मन किसान है, पाप-पुण्य दो बीज हैं। जो बोया जाएगा, वही काटने को मिलेगा। बुरे कर्म काया में जीव को पीड़ा पहुँचाते हैं। कोई बुरा कर्म करके सुख चाहे, तो वह कैसे पाएगा। बबूल का पेड़ लगाकर आम का फल कैसे मिलेगा। प्राणी जहाँ-जहाँ जाता है, उसके कर्म बराबर उसके साथ रहते हैं।

जो प्रारब्ध में बना है, उसको भोगना निश्चित है, वह टल नहीं सकता। मन प्रारब्ध का रूप धारण कर भीतर से ही बाहर सुख-दुःख देने की आज्ञा करता है। जब भोग का समय आता है, तब मन प्रारब्ध रूप होकर बाहर प्रकट होता है। कोई दुःख लेने नहीं जाता, वह तो अचानक ही आ जाता है। जब थोड़े समय के लिए सुख का पहरा आता है, तब दुःख कूच कर जाता है। इस प्रकार जीव कर्मवश सुख-दुःख के झमेले में अनचाहे ही पड़ा रहता है।

रामचरितमानस की प्रस्तुत चौपाइयों में मानसकार ने भी कर्मफल विधान को ही स्पष्ट किया है-

काहु न कोउ सुख-दुःख कर दाता।
निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥

अर्थात कोई भी किसी को सुख-दुःख देने वाला नहीं है। सब अपने ही किए हुए कर्मों का फल भोगते हैं। जब हम संसार पर दृष्टिपात करते हैं, तब हम किसी को सुखी पाते हैं तो किसी को दुःखी पाते हैं। किसी का सुखी या दुःखी होना महज संयोग नहीं, बल्कि उसके पीछे उनके द्वारा किए गए शुभ-अशुभ, अच्छे-बुरे, पाप-पुण्य कर्म ही मूल कारण हैं।

इस ब्रह्मांड में कोई भी घटना अकारण नहीं घटती। हर घटना के पीछे कोई-न-कोई ठोस कारण अवश्य होता है। अस्तु अकारण न तो कोई सुख पाता है और न ही दुःख पाता है। सुख और दुःख का कारण मनुष्य का निजकर्म ही होता है। कोई कारण ही किसी भी घटना के घटने का आधार बनता है।

यदि आज हम सुखी हैं अथवा दुःखी हैं तो यह अतीत में हमारे द्वारा किए गए कर्मों का ही

परिणाम है और भविष्य में हम सुख या दु:ख जिस किसी भी स्थिति में होंगे, वह भी वर्तमान में हमारे द्वारा किए गए कर्मों का ही परिणाम होगा।

कर्मफल विधान व कर्म रहस्य को स्पष्ट करते हुए गुरुवर लिखते हैं कि भारतीय संस्कृति में चित्रगुप्त की कल्पना की गई है, जो पल-पल में मनुष्य के अच्छे-बुरे कर्मों का लेखा-जोखा करता रहता है और उसी के आधार पर उसे स्वर्ग (सुख) अथवा नरक (दु:ख) की प्राप्ति होती है। इस चित्रगुप्त संबंधी आलंकारिक कथन में गहरी सत्यता और कर्म-रहस्य छिपा है। वस्तुत: मनुष्य का मन, मनुष्य का चित्त ही चित्रगुप्त है, जो मनुष्य के कर्मों का लेखा-जोखा करता है और समय आने पर मनुष्य के लिए सुख-दु:ख प्रकट करता है।

मनुष्य के मन में, चित्त में उसके सभी शुभ-अशुभ कर्मों की सूक्ष्मरेखाएँ अंकित होती रहती हैं और ये रेखाएँ समय आने पर सुख और दु:ख के रूप में प्रकट होती हैं। कर्म की रेखाएँ बिना फल प्रकट किए नहीं रहतीं, नहीं मिटतीं। पाप-पुण्य के सभी कर्मों का फल देर-सवेर अवश्य मिलता है। कर्मों की तीन श्रेणियाँ हैं—संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण। इन तीनों प्रकार के कर्मों का संचय मनुष्य के चित्त में निरंतर होता रहता है।

मनुष्य की अंतश्चेतना ऐसी निष्पक्ष, निर्मल, न्यायशील और विवेकवान है, जो अपने-पराये का भेद न कर सत्यनिष्ठ न्यायाधीश की तरह भले-बुरे कार्यों, कर्मों का विवरण अंकित करती रहती है और समय आने पर उसे मनुष्य के जीवन में सुख और दु:ख के रूप में प्रकट करती है। लाचारी में मन के विरुद्ध जो कार्य करने पड़ें, उन्हें संचित कर्म कहा गया है।

जो कार्य विवशता में दबाए जाने पर असहायावस्था में करने पड़ें, पर मन की आंतरिक इच्छा यही रहे कि यदि विवशता न होती तो इस कार्य को कदापि न करते, ऐसी लाचारी में किए गए कर्मों को संचित कर्म कहते हैं। इन संचित कर्मों के संस्कार बहुत कमजोर एवं हलके होते हैं। इसलिए वे मनोभूमि में हजारों वर्षों तक पड़े रहते हैं। यदि इन्हें प्रकट होने का कोई अवसर न मिले तो वे यों ही दबे-दबाए पड़े रहते हैं। यदि उन संचित संस्कारों को लगातार विपरीत स्वभाव के बलवान कर्म संस्कारों के साथ रहना पड़े तो वे नष्ट भी हो जाते हैं।

हमारे भले और बुरे, दोनों ही प्रकार के संचित कर्म संस्कार अनुकूल परिस्थिति पाकर फलदायक होते हैं एवं तीव्र प्रतिकूल परिस्थितियों में नष्ट भी हो जाते हैं। प्रारब्ध उन मानसिक संचित कर्मों को कहते हैं, जो स्वेच्छापूर्वक जान-बूझकर तीव्र भावनाओं से प्रेरित होकर विशेष मनोयोग से किए जाते हैं। इसलिए इनके संस्कार बहुत बलवान होते हैं। कर्म का परिपाक लेकर जब फल बनता है, तब वह प्रारब्ध कहा जाता है।

क्रियमाण कर्म शारीरिक हैं, जिनका फल प्राय: साथ-साथ ही मिलता रहता है, जिन शारीरिक कर्मों के पीछे कोई मानसिक गुत्थी नहीं होती, केवल शरीर द्वारा शरीर के लिए ही किए जाते हैं, वे क्रियमाण कहलाते हैं। इस प्रकार सब कर्मों का फल अवश्य मिलता है। कितने समय और कितने दिनों में फल प्राप्त होगा, इसके संबंध में कुछ नियत मर्यादा नहीं है।

कर्मफल आज, कल, परसों, महीने, वर्ष या जन्मों के अंतर से भी मिल सकता है, लेकिन वह मिलेगा अवश्य—यह सुनिश्चित है, पर ध्यान देने योग्य महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि आलस्य, प्रमाद, निष्क्रियता के कारण और सही दिशा में सम्यक प्रयास और पूर्ण पुरुषार्थ नहीं करने के कारण, पुरुषार्थ की अवहेलना के कारण जो असफलता मिलती है, उसे कदापि प्रारब्ध फल नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार हम देखते हैं कि कर्मों का फल मिलना अवश्यंभावी है, सुनिश्चित है।

गीता के अनुसार कर्म करना हमारे हाथ में है, पर उस कर्म का फल हमारे हाथ में नहीं है। हमें कर्म करने की स्वतंत्रता है, पर बुरे कर्म करके भी अच्छे फल प्राप्त कर लेने की स्वतंत्रता नहीं है। हमारे कर्म की प्रकृति के अनुसार ही हमें सुख अथवा दु:ख के रूप में फल प्राप्त होंगे। अस्तु समझदारी इसी में है कि हम बुरे कर्मों से सदैव दूर रहें और सदैव शुभ कर्म, पुण्य कर्म, अच्छे कर्म करें, जिससे हमें सुख प्राप्त हो और साथ-ही-साथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण यह भी है कि हम शुभ कर्म, पुण्य कर्म भी सुख प्राप्ति की आशा से न करें, वरना सुख पाने की आशा से किए गए कर्म का संस्कार भी मोक्ष, मुक्ति में बाधक है, बंधन है। अस्तु हम निष्काम भाव से कर्म करें। अपने हर कर्म को ईश्वर को ही अर्पित करते रहें।

हर शुभ कर्म को भी कर्त्तापन की भावना से मुक्त होकर ही करें, कर्मफल के प्रति अनासक्त होकर करें। इससे सुख-दु:ख, असफलता-सफलता दोनों ही स्थिति में आप समभाव व समत्व की स्थिति में होंगे और सुख-दु:ख से परे होकर आनंद की स्थिति में होंगे। बिना फल की इच्छा और कर्त्तापन की भावना से रहित होकर किया गया कर्म ही ईश्वर को अर्पित होता है और ऐसा कर्म ही कर्त्ता को भगवान से जोड़ देता है। ऐसा कर्म ही योग बन जाता है। इसलिए ऐसे कर्म को कर्मयोग कहते हैं और कर्मयोग करने वाले को ही कर्मयोगी कहते हैं।

कर्मयोग के द्वारा हम संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण कर्मों से उत्पन्न कर्म संस्कारों का भी नाश कर अपने लिए मोक्ष, मुक्ति और आनंद का द्वार खोल सकते हैं। अस्तु हम भी कर्मयोग करते हुए कर्मयोगी बनें। ❑

पत्रिका रजिस्टर्ड मँगाएँ

डाक-अव्यवस्था के कारण प्राय: अखण्ड ज्योति न मिलने की शिकायत बनी रहती है। अत: सदस्यों की सुविधा के लिए रु. 240/—वार्षिक (20/—प्रतिमाह) शुल्क अतिरिक्त भेजने पर रजिस्टर्ड डाक से भेजने की व्यवस्था जनवरी—2025 से प्रारंभ की जा रही है।

जो सदस्य इस सुविधा का लाभ उठाना चाहें, वे अपना पूरा नाम, पता, सदस्यता क्रमांक, मोबाइल नंबर सहित रु. 240/—(रु. 20/—मासिक) अतिरिक्त भेजकर सूचना अवश्य दें। यह सुविधा वार्षिक सदस्य, बीसवर्षीय सदस्य एवं 2 से 14 तक इकट्ठी पत्रिका मँगाने वालों के लिए उपलब्ध है।

2 से 14 तक पत्रिका मँगाने वालों को भी मात्र रु. 240/—(20/—प्रतिमाह) ही देना होगा।

ईश्वर की अनुभूति का विधान

संत तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में मानव जीवन को 'साधन धाम, मोक्ष कर द्वारा' अर्थात अनुपम साधनों का भंडार और मोक्ष का दरवाजा कहा है। मनुष्य के अतिरिक्त और कोई प्राणी चित्र-विचित्र संसाधनों का सृजन और उपयोग करने की कुशलता कहाँ विकसित कर पाता है ? रहने के लिए पर्णकुटी से लेकर महल और अट्टालिकाओं की संरचना उसी ने विकसित की। शरीर की रक्षा, सुविधा और सज्जा के लिए भाँति-भाँति के वस्त्र-आभूषण उसी ने रचे।

साहित्य, कला और संगीत के कौशल, उनके लिए विविध उपकरण-यंत्रादि और कौन रच सका ? भूचर होने के नाते धरती पर आवागमन के लिए द्रुत गति के वाहन तो तैयार किए ही, आकाश में पक्षियों और पानी में जलचरों से भी अधिक गति और तमाम सुविधाओं से युक्त परिवहन-व्यवस्था भी विकसित की। दूरभाष, दूरदर्शन जैसी सिद्धियों को अपने द्वारा रचे यंत्रों-संसाधनों के माध्यम से जन-जन के लिए सुलभ बना दिया। वास्तव में यह मनुष्य जीवन साधन धाम है।

मोक्ष का द्वार भी यह है। संसाधनों के विकास की तरह मोक्षप्राप्ति की क्षमता और कुशलता भी यही अर्जित कर पाता है। लौकिक वैभव के साथ पारलौकिक सद्गति को हस्तगत करना और किसी प्राणी के बिना कहाँ संभव है ? इसीलिए इसे सुरदुर्लभ भी कहा गया है, लेकिन यहीं विसंगतियाँ खड़ी हो जाती हैं। साधन धाम के नाते जब साधन विकसित और प्रयुक्त होने लगते हैं तो जीव ईश्वर की माया के प्रति मोहग्रस्त होकर, ईश्वर साक्षात्कार, आत्मबोध के लक्ष्यों को भूलने लगता है।

ईश्वरप्रदत्त दोनों ही विशेषताओं का सम्यक उपयोग करने में ही मानव जीवन की पूर्णता मानी जा सकती है। इस सच्चाई को समझकर उसे जीवन में लाने की कुशलता विकसित करना जरूरी है। संभवतः इसी कुशलता की ओर संकेत करते हुए योगीराज श्रीकृष्ण ने '**योगः कर्मसु कौशलम्**' का सूत्र प्रस्तुत किया है।

'ईशावास्य' उपनिषद् का पहला श्लोक जीवन के इस सत्य को समझने और कौशल को विकसित करने का व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है। वह है—

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

अर्थात—इस संसार में छोटा-बड़ा जो कुछ भी है, उस सबमें ईश्वर का निवास है। उसके द्वारा तुम्हें जिस निमित्त जो दिया गया है, उसी का भोग करो। उससे परे भिन्न या अधिक की लालसा मत रखो। यह संपत्ति जिसकी तुम लालसा रखते हो, वह है किसकी ? उपनिषद् के इन सूत्रों पर क्रमशः समीक्षात्मक चिंतन किया जाए तो जीवन की उक्त दोनों विशेषताओं का सदुपयोग करने की कुशलता विकसित की जा सकती है।

ईशावास्यमिदं सर्वं, अर्थात इस संसार में छोटी-बड़ी वस्तुएँ, जड़-जंगम जीव, सभी में ईश्वर

का वास है। ऋषि कहते हैं कि ईश्वर को कहीं खोजना-पाना नहीं है, वह तो सभी में है ही। उसे अनुभव करने की अपनी क्षमता विकसित एवं प्रयुक्त भर करनी है। वह किस रूप में है? उसे कैसे अनुभव करें? इन प्रश्नों का समाधान भी ऋषि देते हैं।

प्रज्ञोपनिषद् में युगऋषि ने परमात्मा को श्रेष्ठ गुणों, उत्कृष्ट आदर्शों का समुच्चय कहा है। जहाँ जो विशेषता जिस भी पदार्थ या जीव में दिखे, उसी को वहाँ प्रभु का स्वरूप समझना चाहिए। भगवद्गीता में विभूतिपाद में भी यही तथ्य भगवान श्रीकृष्ण ने प्रकट किया है। उसे अनुभव करने के लिए श्रद्धा अर्थात उत्कृष्टता के प्रति असीम प्रेम और आदर का भाव विकसित करना जरूरी है।

सूत्र है—**श्रद्धया सत्यमाप्यते** अर्थात श्रद्धा से सत्य को अनुभव किया जा सकता है। परमात्मा सत्य है या सत्य ही परमात्मा है, यह उक्ति सही है। उसे श्रद्धा का स्तर परिष्कृत करने से ही अनुभव किया जा सकता है। श्रद्धा कैसे विकसित हो? शारीरिक या मानसिक शक्ति जितनी, जिस स्तर की है, उसका सदुपयोग पूरी निष्ठा एवं तत्परता के साथ, नियमित रूप से करने से ही वह विकसित होती है। श्रद्धा के विकास का यही सूत्र है।

परमात्मा को विभूतियों के रूप में थोड़ा-बहुत अनुभव किया। अब अपने चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार को उसी के अनुरूप ढालने का प्रयास किया जाए। ईश्वर की किरणों के रूप में जिन श्रेष्ठ गुणों, आदर्शों से प्रेम है, उन्हें जीवन में अपनाए रखने की अदम्य भावना, अविरल साधना-श्रद्धा के कारण होने लगे तो श्रद्धा क्रमशः पुष्ट-समर्थ होने लगती है। प्रिय इष्ट की निकटता अनुभव करने की अदम्य भावना, कठिन तप को भी सरस बना देती है।

माता पार्वती, ध्रुव, प्रह्लाद तथा मीराबाई के जीवन में यह तथ्य दिखाई देता है कि कठोर तप भी कितना सरस लगने लगता है। '**ईशावास्यमिदं सर्वं**' की यह साधना, साधक में वह गुण विकसित कर देती है कि वह साधन धाम में रहते हुए भी मोक्ष के द्वार को खुला रखने में समर्थ हो जाता है।

'**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा**' का मर्म है कि इस परमात्मा ने हमारे लिए जितना दिया है अर्थात उपभोग की जितनी छूट दी है, उतना ही भोग करो। छूट कितनी है? हमने प्रभु को प्यार किया है। उसे विशिष्ट गुणों के रूप में सबमें देखा है। उससे दूर हमें नहीं होना है। उपभोग उतना ही करना है, जितने से अपने अंदर प्रभु के प्रकाश एवं सत्प्रवृत्तियों के विकास में अवरोध न आए। समाज और प्रकृति में भी उनका प्रभाव क्षीण न होने पाए।

इस संकल्पयुक्त प्रयास के साथ ही सद्विवेक का, 'प्रज्ञा' का स्तर साधक के अंदर बढ़ने लगता है। यह प्रज्ञा साधक में वे विशेषताएँ उभार देती है, जिनके कारण जो भी प्रभु से प्राप्त है, उसी का सम्यक सदुपयोग करते हुए वह गौरव एवं संतोष का अनुभव करने लगता है।

'**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा**' की उक्त साधना को राजा जनक अपने ढंग से और गाड़ीवान रैक्य अपने ढंग से करते हैं। विद्वान शंकराचार्य ने अपने ढंग से और निरक्षर कबीर ने इसे अपने ढंग से साधा है। सभी इसी साधना के बल से पूर्ण संतोष के साथ जीवन की श्रेष्ठता, सार्थकता का श्रेष्ठतम लाभ उठाते हैं।

'**कस्यस्विद्धनम्**' यह संपदा किसकी है। समय, प्रभाव, ज्ञान, पुरुषार्थ एवं धन-वैभवरूपी

संपदा हरेक के पास कम या अधिक है। प्रभुकृपा से जितनी जिसे प्राप्त है, उसके उपयोग की उसे छूट है, परंतु वह है किसकी? है तो प्रभु की, लेकिन हम उसका लाभ उठा सकते हैं तो इस कारण वह हमारी भी है। उसका लाभ कैसे मिले? उसे प्रभु का दिया अनुदान मानें। 'मेरेपन' का अहंकार न उभरने दें। प्रभु अनुशासन में उसका उपयोग करें।

इस अनुशासन में उसका जितना उपयोग किया जाएगा, उतना लाभ मिलेगा। तो यह संपदा किसकी? जो उसका जितना सदुपयोग कर ले, उतनी उसकी। प्रभु की संपदा, प्रभु के अनुशासन में प्रयुक्त करने से ही संपदा के होने का लाभ देती है अन्यथा वही विपदा बन जाती है।

सत्पुरुषों के लिए वही संपदा सुख और प्रगति का आधार बनती है और अनीति, अत्याचारियों के लिए वही विपत्ति एवं पतन का कारण बन जाती है। प्रभु द्वारा प्रदत्त लौकिक या दिव्य संपदा को विपदा न बनने दें, संपदा के रूप में उसका समुचित लाभ उठाएँ।

'साधन धाम' का लाभ उठाते हुए 'मोक्ष' का मार्ग भी रुकने न दें। इसके लिए '**ईशावास्यमिदं सर्वं**' की भाव साधना '**कस्य स्विद्धनम्**' की ज्ञान साधना और '**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा**' की कर्म साधना करें और जीवन की धाराओं को सफल, सार्थक बनाएँ—यही ईश्वर की अनुभूति का विधान है। ❑

रूसी साहित्य के शिखर मैक्सिम गोर्की को आज हर कोई जानता है, पर बहुत कम इस बात से परिचित हैं कि उनके जीवन के प्रारंभिक दिन बहुत संघर्षमय रहे।

आर्थिक रूप से विपन्न गोर्की को बहुत वर्षों तक नौकर के रूप में कार्य करना पड़ा और अपने साहित्य प्रेम के कारण अपने मालिकों के दुर्व्यवहार को भी सहन करना पड़ा।

अपनी आर्थिक स्थिति से तंग आकर एक दिन उन्होंने स्वयं को गोली मार ली, पर गोली दिल में न लगकर फेंफड़े में लगी और उनका जीवन बच गया।

इन्हीं कष्टमय दिनों में उन्होंने अपनी पहली पुस्तक लिखी और उसके प्रकाशित होते ही वे एक सुविख्यात लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हो गए।

बाद में अपने कठिन दिनों को याद करते हुए गोर्की ने एक बार कहा—"जब तक आदमी काम को कर्त्तव्य समझकर करता है, उसका जीवन गुलाम का होता है, पर जिस दिन वो उस काम को अपना कर करता है, उस दिन उसके जीवन में सुख और आनंद की शुरुआत होती है।" जीवन में सुखी रहने का यह छोटा-सा सूत्र कई मायनों में बेशकीमती है।

महानता का पथ

हर व्यक्ति महान है; यदि वह अपने अंदर की महानता को जाग्रत कर सके। हम सभी के अंतस् की भूमि उर्वर होती है। महानता के बीज भी यहीं पड़े होते हैं। जिन्होंने इसे अंकुरित कर लिया, वे महानता की श्रेणी में आ खड़े हुए। साधारण-से-असाधारण बनने की कहानी के बीच यही छोटा-सा फासला है। महापुरुषों के निर्माण की प्रक्रिया भी यही है।

एक छोटी उम्र का लड़का था। वह गरीब था। जीविका के लिए लकड़ियाँ बेचा करता था। एक दिन सिर पर लकड़ी का गट्ठर उठाए उस लड़के पर एक सेठ जी की नजर पड़ी। वे उसके गट्ठर की ओर देख रहे थे। उनसे रहा न गया। लड़के से पूछा—"किसने बाँधा है ये गट्ठर?" "जी मैंने!" लड़के ने कहा।

सेठ जी चौंक गए, पूछा—"क्या तुम दोबारा इसे उसी तरह बाँध सकते हो?" "हाँ, हाँ क्यों नहीं।" कहकर उसने दोबारा उसी तरतीब और खूबसूरती से गट्ठर बाँध दिया। सेठ जी उस लड़के की प्रतिभा, लगन और सरलता के कायल हो गए। उसे अपने साथ ले गए और उसकी समुचित शिक्षा का प्रबंध किया। बड़ा होकर यही बच्चा यूनान का महान दार्शनिक पाइथागोरस बना।

महानता बस, एक प्रतीक है। जो खबर में हों, ज़िन्हें सब जानते हों, वे महान हों जरूरी नहीं। वास्तव में महानता की झलक उस बच्चे में है, जो खुद अनुशासित है और अपने बड़ों से भी यही अपेक्षा रखता है। महान वह नौकरानी भी है, जो माता-पिता की अनुपस्थिति में बच्चे को माँ का दुलार देती है, उसकी परवरिश का जिम्मा लेती है।

सड़क पर चलता वह युवक भी महानता की श्रेणी में आ खड़ा होता है, जो अपने समय और पैसे की परवाह न करते हुए किसी जरूरतमंद की मदद के लिए आगे आता है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं, जो हमें हर व्यक्ति में महानता के दर्शन कराते हों। जो महानता के ऐसे ही लक्षणों को ताउम्र बनाए रखते हैं, वही एक दिन महानता का शिखर भी छू लेते हैं।

दार्शनिक कन्फ्यूशियस के मुताबिक, महान वे भी हैं, जो साधारण हैं। महानता हमारी सोच में है, हमारे अंदर बसती है। जिन्होंने सामान्य पृष्ठभूमि से निकलकर बड़ा मुकाम हासिल किया है, ऐसे व्यक्तियों की प्रशंसा करते हम नहीं थकते, पर सहसा यह निष्कर्ष भी निकाल लेते हैं कि वे असाधारण हैं, इसलिए इन लोगों तक पहुँचना सबके बूते की बात नहीं। ऐसे लोगों को किस्मत का धनी भी कह दिया जाता है। दूसरों को अलग बताने या किस्मत का धनी बताने की यह प्रवृत्ति हमें हमारे प्रयासों पर यकीन नहीं करने देती। यदि आप किस्मत आजमाते हुए थक जाएँ तो खुद को आजमाना शुरू करें।

महापुरुषों का जीवन अलग नहीं होता। उनके जीवन की परिस्थितियाँ भी वही होती हैं, जो एक सामान्य मनुष्य की होती हैं, बल्कि कई बार अपेक्षाकृत ज्यादा विकट भी। और-तो-और, जो भी प्रशंसा के काबिल बने, उन्होंने यह सोचकर कभी कोई काम नहीं किया होगा कि उन्हें महान बनना है।

अँगरेज राजनीतिज्ञ विंस्टन चर्चिल ने महानता को दो टूक शब्दों में परिभाषित किया है—यहाँ कोई जन्मजात बड़ा या महान पैदा नहीं हुआ। जो भी खुद के प्रति जिम्मेदार बने, अपनी राह चलते रहे, वे ही महान बने। महानता की बस, इतनी-सी कीमत है-जिम्मेदारी।

महानता के मानक तय किए जाएँ तो इसमें परोपकार का प्रमुख स्थान है। गांधी जी का पूरा जीवन इसी संदेश की व्याख्या करता है। महात्मा गांधी में यदि परोपकार की भावना न रही होती, तो वे अहिंसा धर्म का पालन नहीं कर पाते।

उल्लेखनीय है कि जो स्व से परे जाकर सोचते हैं, हिंसा उनमें आ ही नहीं सकती। ऐसे व्यक्ति हमेशा सच की राह पर चलते रहते हैं। गांधी जी ने अपना समग्र जीवन ही सत्य की प्रयोगशाला बना दिया था। उनकी पौत्री इला गांधी कहती हैं—वे सहज योगी जैसा जीवन जीते थे। मैंने हमेशा उन्हें परोपकार में ही व्यस्त पाया। उनके सिद्धांत सरल हैं। हर इनसान उनके पथ पर चल सकता है। यदि हम सब स्वयं के प्रति ईमानदार रहें तो ऐसी स्थिति में सहिष्णुता, मानवता, शिष्टाचार, ईमानदारी, साहस, समझदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी जैसे सद्गुण स्वत: आ जाते हैं। ऐसा व्यक्ति ही तो महापुरुषों, धार्मिकों, समाज-सुधारकों में गिना जाने लगता है।

वास्तव में स्व से परे वही हैं, जो स्व के भीतर उतर पाएँ। अंतस् में छिपे हुए महानता के बीज को अंकुरित करने का हुनर पैदा कर सकें। हमारे अंदर अनमोल आत्मा विराजमान है। वह सभी चीजों से महान है। उस महानता का बोध हमें होना चाहिए। समझदारी एवं संवेदना से हम उसे विकसित कर सकते हैं। ❑

ईसप ग्रीस की प्रसिद्ध नीति कथाओं के लेखक होने के अतिरिक्त एक ख्यातिप्राप्त दार्शनिक भी थे। एक दिन एक विद्वान उनसे मिलने पहुँचा, पर ईसप को बच्चों के साथ हँसी-ठिठोली करते देख बड़ा निराश हुआ। वो कहने लगा—"मैं तो सोचता था कि आप बड़े मनीषी हैं, पर आप तो नादानी हरकतों में संलग्न हैं।"

ईसप बोले कुछ नहीं, पर उन्होंने एक धनुष उठाकर उस पर डोरी चढ़ाई और एक तीर चलाया, जो साधे गए निशाने पर लगा। यह करने के बाद उन्होंने उस व्यक्ति से पूछा—"बताओ इससे क्या पता चलता है।" उस विद्वान ने बहुत सोचा, पर उसे कोई उत्तर न सूझ पड़ा।

तब ईसप बोले—"यह धनुष अगर हमेशा तना रहे तो टूट जाएगा। डोरी को ढीला छोड़ने पर यह अचूक वार करता है। आदमी को भी अपने मस्तिष्क को कभी-कभी आराम से छोड़ देना चाहिए, हमेशा विचारों से ताने रखने पर उसके टूट जाने का खतरा है।" यह बात विद्वान को तुरंत समझ आ गई।

आत्मकल्याण का साधन है निष्काम सेवा

बोधप्राप्ति के बाद गौतम बुद्ध लोक-कल्याण की भावना से प्रेरित होकर भ्रमण करते हुए उपदेश करने लगे। वे अपने उपदेश में दु:ख के कारणों और दु:ख दूर करने के उपायों पर प्रकाश डालते और कहते—"संसार में जो कुछ दिखाई पड़ता है, वह सब शीघ्र नष्ट हो जाने वाला है। जो कुछ दिखाई पड़ता है, उसमें दु:ख छिपा है। जब सभी चीजें नष्ट होने वाली हैं, तब इनके फंदे में क्यों फँसा जाए? अविद्या ही दु:ख का मूल कारण है। अविद्या के फलस्वरूप मिथ्या दृष्टि का प्रादुर्भाव होता है और मिथ्या दृष्टि के कारण अवास्तविक को वास्तविक और अनित्य को नित्य समझा जाता है और उसी कारण व्यक्ति दु:ख पाता है, पर ज्ञान के द्वारा मनुष्य अपने दु:खों का निरोध कर सकता है। ज्ञान दृष्टि पाकर व्यक्ति जब राग, द्वेष, मोह, आसक्ति, अहंकार इत्यादि पर विजय पा लेता है, तब वह मुक्त हो जाता है। वह संसार में रहकर भी सांसारिकता से निर्लिप्त रहता है।"

उन्होंने कहा—"धर्म का सीधा और सरल रास्ता यही है कि मन को शुद्ध रखा जाए। किसी प्रकार की हिंसा न की जाए। चोरी, दुराचार, झूठ, दूसरों की निंदा से बचा जाए, दूसरों के दोष ढूँढ़ना, अपवित्र भाषण करना, लालच करना, घृणा करना आदि बुरे कर्मों से बचा जाए और अज्ञान से बचा जाए। इस बात की आवश्यकता नहीं कि मनुष्य जंगल में रहकर तपस्या करे और भूख-प्यास, सरदी-गरमी आदि का कष्ट सहन करे—मुख्य बात यह है कि अपने चित्त को शुद्ध रखकर किसी से दुर्व्यवहार न किया जाए। सच्चा धार्मिक वही है, जो हृदय से प्राणिमात्र के प्रति सद्भावना रखे और सबके कल्याण की कामना करे। जो किसी से द्वेष नहीं रखेगा; पीड़ितों और अभावग्रस्तों की सहायता से मुख नहीं मोड़ेगा; कुमार्ग से बचकर रहेगा, उसे जीवनमुक्त ही समझना चाहिए।"

भगवान बुद्ध के इन उपदेशों से प्रभावित होकर हजारों लोग उनके अनुयायी होने लगे। तथागत ने आत्मकल्याण के इच्छुक लोगों का आह्वान किया और हजारों लोगों ने सांसारिक दायित्वों से उपराम होकर स्वयं को बुद्ध के चरणों में समर्पित किया। आत्मकल्याण और लोक-मंगल के लिए समर्पित ऐसे ही लोगों का एक संघ बना, जिसे भिक्षु संघ कहा गया और उस संघ के सदस्य भिक्षु कहे जाने लगे।

उन समर्पित भिक्षुओं में से एक-एक भिक्षु का तथागत को ध्यान था और यह भी कि कौन-कैसा है? एक बार उन्हें एक भिक्षु का समाचार नहीं मिला और न उन्हें वह दिखाई ही दिया। तब भगवान बुद्ध ने अपने समीप खड़े भिक्षु भदंत आनंद से उस भिक्षु का नाम लेकर पूछा—"वह कहाँ है?" तो भदंत आनंद ने उत्तर दिया—"वह अतिसार से पीड़ित है।" सुनते ही तथागत बोले—"चलो उसे देख आएँ।"

भदंत आनंद और कुछ अन्य भिक्षु भी बुद्ध के साथ हो लिए। बुद्ध ने देखा कि वह रुग्ण भिक्षु अपनी कुटिया में अकेला बेसुध पड़ा है। किसी के द्वारा सेवा-सहायता न किए जाने के कारण वह

कुटिया में ही मल-मूत्र से लिपटा पड़ा था। तथागत ने उसे देखकर कहा—"भाई ! तुम्हें क्या कष्ट है ?" "मुझे अतिसार है भगवन्!"—उस भिक्षु ने कहा। "क्या कोई भी तुम्हारी परिचर्या (सेवा) को नहीं आया ?" "कोई नहीं आया भगवन्!" "तो भिक्षु ऐसा क्यों हुआ कि कोई भी भिक्षु तुम्हारी देख-भाल नहीं करते ?" "भगवन्! वे सब योग-साधनाओं में निरत रहते हैं, मैंने तो यही सुना है। इसलिए मेरी परिचर्या को कोई नहीं आया भगवन्!"

अपने पास खड़े भिक्षुओं से कुछ न कहते हुए तथागत ने भदंत आनंद से कहा—"जाओ आनंद, जल ले आओ। हम इस भाई की सेवा करेंगे।" "हाँ भगवन्!"—आनंद ने कहा और जल लेने को चल दिया। जब जल कलश आ पहुँचा तो तथागत ने स्वयं भिक्षु के ऊपर जल डाला और अपने ही हाथों से भिक्षु की परिचर्या की तथा उसे स्नान कराया।

तथागत को स्वयं परिचर्या करते देख वहाँ खड़े भिक्षुगण भी परिचर्या में हाथ बँटाने लगे। तथागत ने किसी से कुछ कहा नहीं। संध्या होने को थी। संध्याकालीन प्रार्थना के लिए सभी भिक्षुगण एकत्र हो रहे थे। परिचर्या के उपरांत तथागत बैठक में पहुँचे और उन्होंने बिना किसी भूमिका के भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा—"भाइयो, क्या हममें से कोई एक भिक्षु रोगी है ?"

"हाँ भगवन् है तो"

"उसे क्या कष्ट है ?"

"उस भाई को अतिसार है भगवन्!"

"उसकी देख-भाल कौन कर रहा है ?"

"कोई नहीं।"

"क्यों ?"

सब चुप थे। थोड़ी देर सन्नाटा छाया रहा। फिर बुद्ध ही बोले—"मैं जानता हूँ। तुम सबको अपने आत्मकल्याण की चिंता है, पर याद रखो योग-साधनाओं से वह संभव है या नहीं, यह तो मुझे ज्ञात नहीं, पर जो सच्चे हृदय से दु:खी जनों की सेवा निष्काम भाव से करते हैं, उनके लिए स्वर्ग, मुक्ति, आत्मकल्याण सर्वथा सुलभ है। उन्हें उससे कोई भी वंचित व विचलित नहीं कर सकता।" सेवा ही साधना की सच्ची परिणति है। ❑

एक व्यापारी रेगिस्तान के रास्ते से व्यापार करके लौट रहा था। उसने अपनी झोली में कई कीमती हीरे-जवाहरात आदि भर रखे थे। कुछ शुभचिंतकों ने उसे समझाया कि वो अपना कुछ भार हलका कर दे और हीरों के बदले पानी की चिशितयाँ बाँध ले। उसने उनकी राय पर ध्यान न देकर यात्रा जारी रखी। दुर्योग से वो रास्ता भटक गया। साथ में लाई रसद व भोजन सामग्री धीरे-धीरे चुक गई। वह भूखा-प्यासा निढाल पड़ा था तब रत्नों-माणिकों के वजन को देखकर उसे अनुभव हुआ कि जीवन से ज्यादा बहुमूल्य और कुछ भी नहीं। हीरे-मोतियों की चमक थोड़ी देर का आकर्षण जरूर प्रस्तुत करती है, पर कठिन समय में पानी की एक बूँद के सामने कोहिनूर की कीमत भी एक पत्थर से ज्यादा नहीं।

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना

संसार में हर व्यक्ति सुखी होना चाहता है। अत: सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यही है कि व्यक्ति सुखी कैसे हो सकता है? सुखी होने के लिए व्यक्ति में सुमति होना परमावश्यक है। सुमति का अर्थ है सद्बुद्धि, सुबुद्धि, अच्छी बुद्धि, विवेक आदि। यदि व्यक्ति में सुमति हो तो वह सुंदर सोचता है और सुंदर करता है।

सुमति ही सुकर्म की जननी है। यदि व्यक्ति में सुमति हो तो वह सुकर्म करता है, शुभ कर्म करता है और सुकर्म से ही, शुभ कर्म से ही उसे सुख प्राप्त होता है। उसी प्रकार कुमति ही कुकर्म की जननी है। कुमति अर्थात कुबुद्धि, दुर्बुद्धि, खोटी बुद्धि, अविवेक। व्यक्ति में कुमति होने पर वह बुरा ही सोचता है और बुरा ही करता है।

कुमति से प्रेरित होकर ही व्यक्ति नानाविध कुकर्म, दुष्कर्म, पापकर्म, अशुभ कर्म, बुरे कर्म आदि करता है और ऐसे कर्मों का परिणाम ही दु:ख है। इस प्रकार यदि व्यक्ति में सुमति हो तो वह सुंदर ही सोचता है और सुंदर ही करता है और उसके परिणामस्वरूप सुख पाता है और कुमति होने पर बुरा ही सोचता है, बुरा ही करता है और बुरे कर्मों के परिणामस्वरूप वह दु:ख पाता है। वह पतन और पराभव को प्राप्त होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मनुष्य जैसा सोचता है, वह वैसा ही करता है और फिर वैसा ही बन जाता है। व्यक्ति को सुखी बनाने में सुमति की भूमिका है तो वहीं दु:खी बनाने में कुमति की भूमिका है।

संसार के समस्त सुखों की जननी सुमति है तो वहीं संसार के समस्त दु:खों की जननी कुमति है। व्यक्ति के जीवन में अथवा संसार में जितने दु:ख हैं वे कुमति, कुबुद्धि, दुर्बुद्धि के कारण हैं। लड़ाई-झगड़ा, आलस्य, दरिद्रता, व्यसन-व्यभिचार, भ्रष्टाचार, छल-प्रपंच, अन्याय, अत्याचार आदि बुरे कर्मों की जननी कुमति ही है और कुमति से प्रेरित ऐसे ही बुरे कर्मों के कारण व्यक्ति का जीवन कष्ट, क्लेश, कलह, अशांति, अभाव, चिंता आदि से भरा होता है। वहीं सुमति से प्रेरित होकर व्यक्ति सदैव सत्कर्म, पुरुषार्थ करता है, जिसके फलस्वरूप वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल होता है और उसका जीवन सुख-शांति और समृद्धि से भर जाता है।

जहाँ सुमति है, वहीं संपदा है और जहाँ कुमति है वहीं विपदा है, वहीं आपदा है। तभी तो गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में उद्घोष किया है—

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना॥

अर्थात जहाँ सुबुद्धि है, वहाँ नाना प्रकार की संपदाएँ रहती हैं और जहाँ कुबुद्धि है, वहीं विपत्ति है, विपदा है, दु:ख है। यदि किसी के पास सुख के पर्याप्त साधन हों और सुमति न हो तो सुख-साधनों का अंबार होते हुए भी वह सुखी नहीं हो सकता और यदि किसी के पास सुमति है, पर सुख के साधन नहीं हैं, तब भी अपनी सुमति के कारण वह समस्त सुख-साधनों का अंबार लगा सकता है और सुखी रह सकता है।

सुख का कारण जहाँ सुमति है तो वहीं दु:ख का कारण कुमति है। सुखी जीवन के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुमति ही है।

यदि व्यक्ति के मस्तिष्क में सुमति है तो वह सत्कर्म और पुरुषार्थ करने को प्रेरित होगा और यदि कुमति है तो उससे प्रेरित होकर वह पाप-पतन और पराभव की ओर अग्रसर होकर दु:ख को प्राप्त होगा।

अत: यह स्पष्ट है कि सुखी जीवन के लिए व्यक्ति में सुमति, सुबुद्धि, सद्बुद्धि का होना परमावश्यक है और उस सुमति, सुबुद्धि, सद्बुद्धि को पाने का एक ही मंत्र है, जिसे गायत्री मंत्र कहते हैं।

समस्त धर्मग्रंथों में गायत्री मंत्र की महिमा एक स्वर से कही गई है। समस्त ऋषि-मुनि मुक्त कंठ से गायत्री का गुणगान करते हैं। गायत्री को ह्रीं-बुद्धि, श्रीं-समृद्धि और क्लीं-शक्ति—इन त्रिगुणात्मक विशेषताओं का उद्‌गम कहा जा सकता है।

गायत्री महाविद्या के मर्मज्ञ गुरुवर लिखते हैं कि 'गायत्री सद्बुद्धि का मंत्र है। गायत्री सद्ज्ञान का मंत्र है। इस महामंत्र में कुछ ऐसी विलक्षण शक्ति है कि उसे जपने वाले के मस्तिष्क और हृदय पर बहुत जल्दी आश्चर्यजनक प्रभाव परिलक्षित होने लगता है। मनुष्य के मस्तिष्क से कुमति मिटने लगती है। मनुष्य के मन:क्षेत्र में समाये हुए काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, चिंता, भय, शोक, ईर्ष्या, द्वेष, पाप, कुविचार आदि चाहे कितनी ही गहरी जड़ जमाए बैठे हों, मन में तुरंत ही हलचल आरंभ हो जाती है और उनका उखड़ना, मिटना प्रत्यक्ष दिखाई पड़ने लगता है, अनुभव होने लगता है। व्यक्ति के जीवन में जो दु:ख दिखाई पड़ते हैं वे कुबुद्धि, कुमति, दुर्बुद्धि से प्रेरित होकर व्यक्ति के द्वारा अतीत अथवा वर्तमान में किए गए कर्मों के ही परिणाम हैं। उसके पीछे वर्तमानकाल की व भूतकाल की कुबुद्धि ही मूल कारण है। गायत्री मंत्र का प्रधान कार्य उसी कुमति, कुबुद्धि को हटाना और मिटाना है।'

गायत्री-उपासना के फलस्वरूप उपासक के मस्तिष्क में सद्विचार और हृदय में सद्भाव उत्पन्न हो जाते हैं, जिसके कारण मनुष्य का जीवन-क्रम ही बदल जाता है। सद्भावना व सद्बुद्धि के साथ-साथ उसे अनायास ही अनेक प्रकार के सुख-सौभाग्य उपलब्ध होने लगते हैं, साथ ही उसके समीप रहने वाले पड़ोसी भी उसके आस-पास संव्याप्त गायत्री मंत्र की ऊर्जा से ओत-प्रोत होकर सत्कर्म करने को प्रेरित होने लगते हैं और सुख-शांति तथा संतोष प्राप्त करते हैं। ऐसे गायत्री-उपासक जहाँ भी रहते हैं, वहाँ सुखद वातावरण उत्पन्न करते हैं।

साधक को सद्बुद्धि की अजस्र धारा गायत्री माता का पयपान करने से ही प्राप्त होती है। इसे पाकर मनुष्य दैहिक, दैविक, भौतिक आदि त्रितापों से छुटकारा पाकर सच्ची शांति का अधिकारी बनता है। वह सत्-चित्-आनंदस्वरूप परमात्मा का सच्चा युवराज बन अपने पिता के इस पुण्य उपवन में आनंद की क्रीड़ा करने लगता है।

गायत्री की साधना द्वारा आत्मा पर जमे हुए मल विक्षेप हट जाते हैं, तो आत्मा का शुद्ध स्वरूप प्रगट होता है और अनेक ऋद्धि-सिद्धियाँ भी परिलक्षित होने लगती हैं। जैसे दर्पण माँज देने पर उसका मैल छूट जाता है, वैसे ही गायत्री-साधना से आत्मा निर्मल एवं प्रकाशवान होकर ईश्वरीय गुणों, सामर्थ्यों एवं सिद्धियों से परिपूर्ण बन जाती है। गायत्री-साधना में कोई भूल रहने पर भी किसी का अनिष्ट नहीं होता, इससे सरल,

स्वल्प श्रमसाध्य और शीघ्र फलदायिनी साधना दूसरी नहीं है।

गायत्री मंत्र जपने से उपासक का आंतरिक कायाकल्प होने लगता है। इस महामंत्र की उपासना आरंभ करते ही साधक को ऐसा प्रतीत होने लगता है कि उसके आत्मिक क्षेत्र में एक आनंददायी, आह्लादकारी हलचल-सी होने लगी है। उसके अंतस् में करुणा, प्रेम, सत्य, संवेदना आदि दैवी व दिव्य भाव उमड़ने, उमगने, उफनने लगे हैं। उसके हृदय में शांतिदायक, आनंददायक, शीतल निर्झणी बहने लगी है जिससे रोम-रोम पुलकित हो उठे हैं।

गायत्रीसाधक के मन में परम शांति और प्रफुल्लता छाने लगती है। विवेक, दूरदर्शिता, तत्त्वज्ञान और ऋतंभरा प्रज्ञा की अभिवृद्धि होने से अनेक कुमति व अज्ञानजन्य दु:खों का निवारण हो जाता है। प्रारब्धवश, अनिवार्य कर्मफल के कारण कष्टसाध्य परिस्थितियाँ हरेक के जीवन में आती रहती हैं। जिनसे घबराकर साधारण मनोभूमि के लोग जहाँ घोर कष्ट पाते हैं तो वहीं आत्मबलसंपन्न गायत्रीसाधक अपने विवेक, ज्ञान, वैराग्य, साहस, आशा, उत्साह और ईश्वर विश्वास के आधार पर इन कठिनाइयों को हँसते-हँसते आसानी से काट लेता है।

बुरी अथवा साधारण परिस्थितियों में भी वह आनंद में उमगता और उफनता रहता है और सदैव सुख, शांति, मस्ती और आनंद से भरा हुआ जीवन जीता है।

गायत्री मंत्र निस्संदेह सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वोत्तम मंत्र है। इसके तीन पाद या चरण होने से इसे त्रिपदा भी कहा गया है।

गायत्री मंत्र का सीधा-सादा अर्थ है कि भगवान सविता के श्रेष्ठ तेज का हम ध्यान करते हैं। वह हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर चलने को प्रेरित करें।

गायत्री मंत्र के अंतिम चरण—'**धियो यो नः प्रचोदयात्**' में भगवान से बुद्धि को प्रकाशित करने की ही माँग की गई है। सचमुच सद्बुद्धि से बढ़ कर दूसरी कौन-सी वस्तु हो सकती है। सद्बुद्धि अपने आप में एक दिव्य अनुदान और वरदान है, जिससे सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है।

अस्तु गायत्री-साधना, गायत्री-उपासना सबके लिए हितकारी और मंगलकारी है। यह सद्बुद्धि, सद्ज्ञान, लौकिक सुख के साथ-साथ मोक्ष, मुक्ति और परमात्मप्राप्ति का सर्वसुलभ साधन है। यह सर्वश्रेष्ठ व सार्वभौम मंत्र है और सबके लिए उपयोगी है। ❑

राजा को महामंत्री की नियुक्ति करनी थी। तीन योग्य उम्मीदवारों ने अपनी दावेदारी पेश की। राजा ने पूछा—"यदि मेरी और तुम्हारी दाढ़ी में साथ-साथ आग लग जाए तो पहले किसकी आग बुझाओगे?"

पहला बोला—"पहले आपकी बुझाऊँगा।" दूसरा बोला—"अपनी बुझाऊँगा।" और तीसरा बोला—"एक हाथ से आपकी और दूसरे हाथ से अपनी बुझाऊँगा।"

राजा ने तीसरे आदमी की नियुक्ति महामंत्री पद पर कर दी और बोले—"जो अपनी उपेक्षा कर दूसरों का भला करता है, वह अव्यावहारिक है। जो केवल अपना सोचता है, वह स्वार्थी है और जो अपनी व दूसरों की भलाई को समान रूप से देखता है, वह न्यायसंगत है।"

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

पर्व विशेष-होली पर्व

जीवन-यज्ञ का पर्व होली

जीवन के चहुँओर उल्लास, आनंद, सौंदर्य, सुगंध, अपनत्व और आकर्षण से सराबोर वातावरण का पर्याय-प्रतीक है यह होलिका पर्व। मनुष्य, प्रकृति और परमात्मा के अंतर्संबंधों की अभिव्यक्ति होली की मिठास और रंगों में समाहित हो सभी दिशाओं को हर्षोल्लास से भर देती है। यह हमारी सनातन यज्ञीय परंपरा का उल्लास पर्व है।

ऋषि संस्कृति में सब कुछ यज्ञमय है। जीवन, जगत् और ईश्वर सब यज्ञमय स्वरूप में प्रतिष्ठित है। सृष्टि में जीवन-यज्ञ का प्रारंभ अन्न से होता है। अन्न को प्रकृति धारण करती है। प्रकृति के यज्ञ का वरदान अन्न है और अन्न का वरदान जीवन तथा जीवन-यज्ञ का वरदान आनंद है। आनंद में स्वयं परमात्मा प्रतिष्ठित हैं, जो सभी दु:ख, कष्ट, पीड़ाओं का नाश करने वाले हैं। होली पर्व इसी अन्न ब्रह्म से आनंद ब्रह्म की जीवनयात्रा का उत्सव है। अन्न की पूजा और आनंद की अभिव्यक्ति—यही होली की दिव्य परंपरा का संदेश है।

हमारी संस्कृति की पुरातन यज्ञीय परंपरा में इस महापर्व को नवसस्येष्टि यज्ञ कहा जाता है। खेतों में पके नए अन्न अर्थात नवान्न की बालियों को यज्ञ में दान करके उसके प्रसाद को ग्रहण करने तथा फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा के पूर्णचंद्र की सुख-समृद्धि हेतु पूजा करने की प्राचीन परंपरा रही है। अन्न को 'होलक' या 'होला' कहा जाता है। इसी से होलिका शब्द की उत्पत्ति मानी गई है। अन्न को अग्नि में यज्ञीय प्रक्रिया से संस्कारित कर ग्रहण करने का यह आदर्श पर्व सृष्टि में जीवन के अस्तित्व को सुख-समृद्धि और आनंद से भर लेने की मंत्रणा लेकर प्रस्तुत होता है।

हमारे जीवन में अन्न संवाहक है प्राण का, प्राण संवाहक है विचार और भावों की संवेदना का तथा यह भावों की संवेदना संवाहक है अंतस्थ प्रसन्नता और आनंद की। आनंद की स्थिरता और शाश्वतता ही जीवन और सृष्टि की पूर्णता का रहस्य है। सृष्टि में जीवन का आविर्भाव और जीवन की पूर्णता का मर्म लिए प्रत्येक वर्ष यह पर्व हमें अपने अस्तित्व को आनंद से भर लेने का सुअवसर लेकर प्रस्तुत होता है। देश-काल-स्थिति की विद्या से जुड़े मर्मज्ञ होली के मर्म को बखूबी जानते हैं और इस पर्व की सार्थकता को सिद्ध भी करते हैं।

होली, दीपावली और महाशिवरात्रि—इन तीनों का साधना जगत् में अत्यंत महत्त्व है। ये तीनों क्रमश: जीवन की उत्पत्ति और सार्थकता, शक्ति और उसका वैभव तथा सृष्टि और उसके प्रयोजन के विधानों से संबंधित हैं। यहाँ होली जीवन की सार्थकता की द्योतक है। सृष्टि में प्रथम पुरुष मनु का जन्म भी इसी दिन हुआ था, इसलिए इस घड़ी को मन्वादितिथि भी कहा जाता है।

भारतीय ज्योतिष की गणनाओं में होली की रात्रि से ही नववर्ष, नवसंवत् का आरंभ होता है। इसी प्रकार अनेकों मर्म और रहस्य इस महापर्व होली की दिव्य परंपरा में समाहित हैं। जिसकी जैसी गति और प्रवृत्ति होती है, वह वैसा ही इस दिव्य पर्व का लाभ ले पाता है।

जनसामान्य की दृष्टि से तो होली का महत्त्व इसके पौराणिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्वरूप

में सन्निहित है। हमारे प्राचीन शास्त्रों में इस पर्व के उपलक्ष्य में अनेकों आख्यान एवं दृष्टांत मौजूद हैं। जैमिनीकृत पूर्व मीमांसा सूत्र, कथा से लेकर सूत्र-साहित्य, नारद पुराण, भविष्य पुराण, श्रीमद्भागवत आदि ग्रंथों में इस पर्व का उल्लेख है।

राक्षसी ढुंढी का दृष्टांत हो या भगवान कृष्ण का महारास, कामदेव के पुनर्जन्म का आख्यान हो या शिव की बरात का चित्रण—इन सभी कथानकों का होली पर्व से विशिष्ट संबंध है। इनमें भी सर्वाधिक प्रचलित और प्रसिद्ध कथानक भक्त प्रह्लाद और हिरण्यकशिपु का है।

अहंकार और आसुरी प्रवृत्तियों के प्रतीक हिरण्यकशिपु और उसकी बहन होलिका का विनाश एवं भक्त प्रह्लाद की अटूट भक्ति और ईश्वरनिष्ठा की विजय के प्रसंग, इस पर्व को बुराइयों के अंत और अच्छाइयों की विजय के रूप में मनाने की नूतन प्रेरणा प्रदान करते हैं।

भारत की संस्कृति, समाज और धर्मनिष्ठा में होली शीर्षस्थ पर्व है। हर्षोल्लास का यह पर्व भारतीय समाज की विविधता को एकता-समरसता प्रदान करते हुए संपूर्ण जनमानस का मंगलोत्सव बन जाता है। यह उत्सव देश के विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग नाम-रूपों में प्रचलित है। जैसे ब्रज की होली और बरसाने की 'लठमार होली' पूरे विश्व में प्रसिद्ध है।

मथुरा-वृंदावन में होली का उत्सव पूरे पंद्रह दिन चलता है। महाराष्ट्र में होली दहन से लेकर पंचमी तिथि तक इसे विशेष रूप से पकवानों के स्वाद और रंगों की बौछार के साथ में मनाया जाता है। कुमाऊँनी परंपरा में शास्त्रीय रीति से गीत बैठकी आयोजित होती है, बंगाल में ढोल यात्रा, तमिलनाडु में कमन पोडिगई, हरियाणा में धुलेंडी, मध्य प्रदेश में भगोरिया, बिहार में फगुआ, पंजाब में होला महोल्ला का विशेष आयोजन, छत्तीसगढ़ की होरी-लोकगीत तथा गुजरात के आदिवासी समाज के लिए यह एक बड़ा त्योहार होता है। इस तरह पूरे भारतवर्ष में इसकी अनूठी परंपराएँ प्रचलित हैं।

हमारे पड़ोसी देश नेपाल में भी इस पर्व को धूम-धाम से मनाने की परंपरा है। इसके अतिरिक्त विदेशों में प्रवासीजन भी इसे पूरे उत्साह से मनाते और अपनी इस सांस्कृतिक विरासत पर गर्व करते हैं।

वैसे तो लोकप्रचलन में यह पर्व दो दिनों का होता है—प्रथम दिन होलिका पूजन और दूसरे दिन रंग खेलने अर्थात धुलेंडी का, परंतु इसकी शुरुआत वसंत पंचमी से ही हो जाती है। जहाँ पर होलिका दहन होता है, उस स्थान पर पहले से ही झंडा स्थापित कर उसके आस-पास लकड़ियाँ व गोबर के उपले एकत्रित कर लिए जाते हैं।

इसके उपरांत फाल्गुनी पूर्णिमा के दिन सायंकाल सभी नगर-ग्रामवासी विधिवत् पूजन कर सुख-समृद्धि और खुशहाली की कामना करते हैं तथा रात्रि में इसका दहन करते हैं। इसकी अग्नि में गेहूँ की पकी हुई बालियों व चने के होले को भूनने तथा प्रसाद रूप में वितरित करने का भी प्रचलन है। यह कृषिप्रधान व्यवस्था में अन्न के सम्मान एवं स्वागत की दिव्य परंपरा को दरसाता है।

दूसरे दिन होलिका दहन की ठंढी राख से धुलेंडी खेलकर तथा आपस में समस्त भेदभाव, मनमुटाव हटाकर, रंग-गुलाल लगाकर, गले मिल कर एवं मिठाइयाँ बाँटकर पूर्ण उत्साह से होली मनाई जाती है। होली के गीतों, रंगों के साथ नाचते हुए लोग, सभी ओर मस्ती और आनंद से सराबोर वातावरण हमारी संस्कृति को सर्वथा अनूठा और अद्भुत स्वरूप प्रदान करते हैं। राग-रंग में डूबा समाज, रंगों में नहाई संस्कृति और सौंदर्य-सुगंधि को धारण किए प्रकृति—सब मिलकर जीवन में

एक लौकिक आनंद की सृष्टि करते हैं। प्रकृति में वसंत और जीवन में आनंद-इसके संपर्क-सान्निध्य में आने वाला भला कोई अछूता कैसे रह सकता है?

यही कारण है कि दूसरे देशों-संस्कृतियों के लोग भी होली का उत्सव मनाने-देखने भारत आते हैं व इस उल्लास के महापर्व में भागीदारी कर इस अलौकिक आनंद के साक्षी बनते हैं। ढोल की थाप, मंजीरों की झँकार, फाग, धमार, चैती और ठुमरी का गान, टेसू, चंदन, गुलाब का रंग, गुझिया, बरफी, पूये के मिष्टान्न, कांजी, ठंढाई का पेय, खीर-पूरी, पूरी-कचौड़ी के व्यंजन आदि सब मिल कर हमारे इस सांस्कृतिक महापर्व को पूरी दुनिया में अनूठा और अद्वितीय बना देते हैं। हम सभी का सामूहिक कर्त्तव्य है कि भावी पीढ़ी को अपनी संस्कृति के इस दिव्य पर्व से जुड़ी विरासत के प्रति जागरूक बनाएँ और इसकी महत्ता समझाएँ।

आधुनिकता की चपेट से हमारा यह होलिकोत्सव भी अछूता नहीं रह गया है। धीरे-धीरे इसमें भी अनेक तरह की विसंगतियाँ और कुप्रथाएँ स्थान लेने लगी हैं। जैसे प्राकृतिक रंगों के स्थान पर रासायनिक हानिकारक रंगों का प्रयोग, लोकगीतों-शास्त्रीय रागों के स्थान पर फूहड़ व अश्लील फिल्मी व आँचलिक गानों का गायन, नशाखोरी और कुत्सित चेष्टाएँ, हास-परिहास के स्थान पर दुर्व्यवहार और लड़ाई-झगड़ा—ये सब ऐसे कारण हैं, जो होली जैसे पवित्रता और पुरुषार्थ भरे पर्व को कलंकित बना रहे हैं।

उत्सव बनाने के बिगड़ते हुए स्वरूप को देखकर अब समाज का एक बड़ा वर्ग इससे दूरी बनाने लगा है। अत: आवश्यकता है इस महापर्व को इसकी गरिमा और महत्ता के अनुरूप उत्साहपूर्वक मनाने और इस ओर औरों में जागरूकता लाने की। इसकी शुरुआत अपने ही घर-परिवार और संपर्क क्षेत्र से हो तो यह प्रयास ज्यादा प्रभावी और सार्थक रहेगा।

इस होली पर छोटे-छोटे अनुबंध, जैसे बाजार में मिलने वाले रासायनिक रंगों का उपयोग न कर प्राकृतिक रंगों या घर पर बनाए रंगों का उपयोग करना, नशा न करना, पारंपरिक गीतों-नृत्यों के कार्यक्रमों का आयोजन अथवा उनमें भागीदारी करना, अपने मनमुटाव, ईर्ष्या-द्वेष को त्यागना, फूहड़ता-स्वच्छंदता से दूर रहते हुए सात्त्विकता और सद्भावना के साथ होली मनाने के लिए संकल्पित होना—यदि इतना संभव हो सके तो निश्चित ही यह महापर्व हमारे जीवन को समस्त कल्मष-कषाय से निवृत्ति प्रदान कर आनंद और उल्लास से भर देगा।

तब प्रकृति का आनंद जैसे वसंत बनकर फूट पड़ता है, वैसे ही हमारे भीतर का आनंद भी चहुँओर सद्भाव-संवेदना को बिखेरता हुआ सार्थकता को प्राप्त कर सकेगा। ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

शिकायत न करें, धन्यवाद दें

मुसलिम बादशाह महमूद शिकार करके अपने नौकर के साथ लौट रहा था। वह राह भटक गया। भूख लगी तो एक वृक्ष के नीचे खड़ा हो गया—जो फलों से लदा था। वृक्ष अपरिचित था, सो फल भी अन्जान। महमूद ने उसे तोड़ा और चाकू निकाल कर एक टुकड़ा काटकर नौकर को दिया। यह उसका स्वभाव था। वह नौकरों-सेवकों को वही सम्मान देता था, जो अपने परिजनों को। नौकरों का शोषण करके, उनका पेट काट करके वह अपना कोष नहीं बढ़ाता था। उन्हें अभाव में रखकर बाहर दान-पुण्य, परोपकार करना वह छलावा व पाप समझता था। उसे धर्म के मर्म की बखूबी समझ थी। नौकर ने खाया। बड़े अहोभाव से कहा—"थोड़ा और।"

इस तरह फल का तीन हिस्सा वह खा गया। वह और माँगने लगा। इस दौरान वे चलते-चलते आगे निकल आए थे, सो और फल तोड़ना भी संभव न था। महमूद ने कहा—"अब एक टुकड़ा मुझे खाने दे।" पर वह नहीं माना और फल छीनने लगा। बादशाह ने फल को जल्दी से मुँह में डाल लिया। इतनी कड़वी चीज उसने अपने जीवन में कभी न चखी थी। उसने थूक दिया और नौकर से पूछा—"यह जहर है—तूने बताया क्यों नहीं? खाया क्यों?"

नौकर ने कहा—"जिन हाथों से इतने स्वादिष्ट फल मिले हों, उन हाथों से मिले एक कड़वे फल की क्या शिकायत।" महमूद ने नौकर को कलेजे से लगा लिया। शिकायत दूर करती है; धन्यवाद पास लाता है; सख्ती-शोषण सर्वनाश करता है; सहयोग-समत्व-समर्पण विकास का द्वार बनता है।

हमारी पात्रता क्या है? योग्यता क्या है? सामर्थ्य क्या है? कुछ भी नहीं। कितना कुछ मिला है हमें, जो बहुतों के लिए सपना है। यह उसकी अनुकंपा है, उसका प्रसाद है। इसके लिए हम उसके प्रति अहोभाव से नहीं भरते, उसे कभी धन्यवाद देकर उसके प्रति समर्पित नहीं होते। उससे हमेशा और की माँग करते रहते हैं। उससे मनमानी चीजें न मिलने पर शिकायत करते रहते हैं। नहीं! धन्यवाद दें। शिकायत न करें। शिकायत करेंगे तो उसकी जो लहरें दिल में उठती हैं, वे भी धीरे-धीरे खो जाएँगी।

शिकायती हृदय से उपासना असंभव है। जितनी ज्यादा भूख होगी धन-संपदा की, उतनी ही ज्यादा शिकायतें होंगी, उतना ही परमात्मा से फासला बढ़ेगा। इस बारीकी को बहुत गहराई से समझना होगा। धन्यवाद व अनुग्रह के भाव से उसकी अंतस् में उठती लहरें बड़ी होती जाएँगी। एक दिन सब किनारे, सीमाएँ ध्वस्त हो जाएँगी और हम सागर में, सागर हम में उतर जाएगा।

हम ऐसा नहीं कर पाते। जितना ही हमें मिलता है, उतने ही हम दरिद्र हो जाते हैं। हम उसे यों ही स्वीकार लेते हैं और कहते हैं—"यह कुछ भी नहीं, और चाहिए, बहुत कुछ।" हमारी इच्छाओं और वासनाओं का कोई अंत नहीं।

मनोविज्ञान कहता है कि जब मनुष्य की जिंदगी में ज्यादा परेशानी होती है तो वह शांत रहता है। वह उसमें उलझ जाता है, अशांत होने की भी उसे सुविधा नहीं होती। सुविधाएँ बढ़ने के क्रम में उसकी अशांति भी बढ़ती जाती है। सुविधा में व्यस्तता कम और उलझाव खतम और फिर उपद्रव शुरू। हम तब स्वार्थ, शोषण एवं शिकायतों में पड़ जाते हैं।

जो नहीं मिलना है—वह नहीं मिलता। उसकी बात ही नहीं उठानी चाहिए। सिर्फ सही तरह से प्रयास करते जाना चाहिए, अपना मात्र कर्त्तव्य समझकर। माँग करना अशिष्ट है, कुसंस्कार है। जो मिला है, उसका भरपूर आनंद लेना चाहिए, उत्सव मनाना चाहिए। धीरे-धीरे हृदय—प्रेम, भक्ति-रस से भरता जाएगा। आनंदित करने वाली, सहज बनाने वाली, तृप्ति देने वाली नई हवाएँ आने लगेंगी।

जिंदगी में हमारी चाहत के अनुसार सब कुछ घटित नहीं होता। सब कुछ हमें नहीं मिलता, पर हम चाहें तो ऐसा होता भी है। मतलब दोनों बातें सत्य हैं। 'चाह' जो 'राह' दे, उस पर चलने से मंजिल मिलती है। चित्त को शिकायत के बजाय धन्यवाद से भरें और धन्यवाद रुकावट न बन पाए, इसलिए ईमानदारी से गति करते रहें। अक्सर शिकायती दौड़ता है, धन्यवादी बैठ जाता है। यह गहरे संतुलन की साधना है। होश रखेंगे तो सब सध जाएगा। ❑

न्यूयॉर्क के प्रसिद्ध मेयर ला गार्डिया अपनी प्रबंध कुशलता एवं न्यायप्रियता के लिए विख्यात थे। वे अधिकतर मुकदमों की सुनवाई में बैठा करते, ताकि उन्हें नगर की आपराधिक स्थिति पता रहे।

एक दिन उनके सामने एक नौजवान का मुकदमा आया, जिस पर चोरी का आरोप था। युवक पढ़ा-लिखा लग रहा था, उन्होंने उससे पूछा कि उसने क्या चुराया है? पता चला कि युवक शिक्षित है, पर रोजगार के अभाव में उसने पैसों की तंगी के कारण एक ब्रेड की चोरी की है।

ला गार्डिया ने निर्णय लिया कि युवक पर लगा आरोप सिद्ध होता है, अतः उस पर 10 डॉलर का जुरमाना लगाया जाता है। यह कहते हुए उन्होंने अपनी जेब से 10 डॉलर निकालकर उस युवक को दिए और उससे बोले—"ये लो तुम्हारा जुरमाना।" इसके बाद वे अदालत में उपस्थित सभी लोगों को संबोधित करके बोले—"इसी के साथ मैं यहाँ मौजूद हर व्यक्ति पर आधे डॉलर का जुरमाना लगाता हूँ; क्योंकि हम लोग उस समाज का हिस्सा हैं, जहाँ एक शिक्षित नौजवान को एक ब्रेड चुराने के लिए मजबूर होना पड़ता है।"

अद्भुत क्रांतिकारी : वीर सावरकर

जो वर्षों तक लड़े जेल में,
उनकी याद करें,
जो फाँसी पर चढ़े खेल में,
उनकी याद करें।
याद करें काला पानी को,
अँगरेजों की मनमानी को।
कोल्हू में जुट तेल पेरते,
सावरकर की बलिदानी को॥

ये पंक्तियाँ अनन्य देशभक्त, क्रांतिकारी वीर सावरकर के अदम्य साहस का स्मरण कराती हैं।

वीर सावरकर का व्यक्तित्व बहुआयामी था, वे क्रांतिकारी होने के साथ-साथ मौलिक चिंतक, समाज सुधारक, इतिहासकार व लेखक भी थे। 28 मई, 1883 को जन्म के बाद अपने माता-पिता से शिवाजी, महाराणा प्रताप तथा पेशवाओं की वीरगाथाएँ सुन-सुनकर वे बड़े हुए।

वीर सावरकर के व्यक्तित्व ने भारतीय युवाओं के हृदय में क्रांति की ज्वाला जगा दी थी। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में जब स्वराज्य का नाम लेना भी देशद्रोह माना जाता था, तब पूर्ण स्वतंत्रता की पहली आवाज उन्होंने सन् 1905 में पूना में लगाई।

अँगरेजों ने 'वंदे मातरम्' बोलने व लिखने पर प्रतिबंध लगा रखा था, ऐसे में भी लंदन में 1857 की क्रांति के उपलक्ष्य में आयोजित स्वर्ण जयंती कार्यक्रम के लिए छापे गए आमंत्रण पत्र पर 'वंदे मातरम्' लिखकर उन्होंने अँगरेजों को खुली चुनौती दी। बैरिस्टरी उत्तीर्ण करने के बाद ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति वफादार रहने की शपथ लेने से इनकार करने पर उन्हें अपनी डिग्री से वंचित रहना पड़ा, पर इसे उन्होंने गौरव के रूप में स्वीकार किया।

सावरकर द्वारा लिखित '1857 का स्वतंत्रता संग्राम' नामक ओजस्वी पुस्तक विश्व की प्रथम पुस्तक है, जिससे भयभीत अँगरेज सरकार ने उसके प्रकाशन से पहले ही प्रतिबंध लगा दिया था। सावरकर ने ही भारत का पहला राष्ट्रध्वज तैयार कर उसे जर्मनी के स्टुटगार्ट नामक स्थान पर अंतरराष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन में भीखाजी कामा के द्वारा सन् 1907 में फहरवाया था।

इंग्लैंड में उन्हें गिरफ्तार कर मुकदमा चलाने के लिए पानी के जहाज द्वारा भारत लाया जा रहा था। उस जहाज से गहरे समुद्र में छलाँग लगाकर अँगरेजी सैनिकों को चकमा देने के उनके साहसिक प्रयास ने सारे विश्व में खलबली मचा दी थी। अँगरेजी सैनिकों की गोलियों की बौछार के बीच में वे तैरते हुए फ्रांस की भूमि पर पहुँच गए थे।

अँगरेजी सत्ता के विरुद्ध क्रांति का बिगुल बजाने के अपराध में एक ही जन्म में दो-दो आजन्म कारावास की सजा पाने वाले सावरकर न केवल पहले, अपितु अकेले भारतीय थे। उनकी सारी संपत्तियाँ अँगरेजों ने जब्त कर ली थीं एवं उनके परिवार को भीषण कष्टों का सामना करना पड़ा। उनके अन्य दो भाइयों को भी क्रांति में भाग लेने पर अँगरेजों ने जेल में डाल दिया था।

खतरनाक मुजरिम मानते हुए सावरकर को काला पानी (सैल्यूलर जेल, अंडमान व निकोबार) भेज दिया गया। जेल में सावरकर को कोल्हू में बैल की तरह जोतकर तेल पिरवाया

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

जाता था। मूँज कुटवाकर जब तक हाथों से खून न टपकने लगे उसकी रस्सी बनवाई जाती थी। बात-बात पर अँधेरी कोठरी में बंद कर दिया जाता था।

उनके बड़े भाई गणेश सावरकर भी उन दिनों सैल्यूलर जेल में ही बंद थे, परंतु वर्षों तक दोनों भाइयों को मिलने तक नहीं दिया गया। जेल में अमानवीय अत्याचारों का वर्णन सावरकर जी ने 'माझी जन्मठेप' (मेरा आजीवन कारावास) नामक पुस्तक में किया है। लेखन-सामग्री के अभाव में उन्होंने जेल की कोठरी की दीवारों पर कीलों और काँटों की मदद से 'कमला काव्य' जैसी उत्कृष्ट कृति की रचना की।

कालापानी में भीषण शारीरिक और मानसिक यातनाएँ सहते हुए भी सावरकर जी ने अपनी प्रबल देशभक्ति की ज्योति को जगाए रखा। यह खेद का विषय है कि इतने कष्टों व त्याग के बाद भी सावरकर जी को अनेकों बार उपेक्षित व प्रताड़ित किया गया। यह अद्‌भुत क्रांतिवीर 26 फरवरी, 1966 को हमेशा-हमेशा के लिए विदा हो गया, परंतु उनका चरित्र भारतीय युवाओं को युगों-युगों तक प्रेरित करता रहेगा। ❑

एक संत अपने शिष्यों के साथ गंगा किनारे बैठे हुए थे। उनसे थोड़ी दूर एक व्यक्ति गंगा नहा रहा था। उसने बहुत देर तक गंगास्नान किया और फिर किनारे बैठकर भोजन करने लगा। उसी समय एक अपंग व्यक्ति उसके पास आकर भोजन की याचना करने लगा। उसे कुछ देने के बजाय वो व्यक्ति उस अपंग को भद्दी-भद्दी गालियाँ देने लगा और अपने पास से हटाने के लिए धक्का भी देने लगा।

यह देखकर संत अपने शिष्यों से बोले—"गंगास्नान का पुण्य तो बहुत देखा था, पर आज पाप भी देख लिया।"

शिष्यों के कुतूहल को दूर करते हुए वे बोले—"केवल बाहर से शरीर साफ कर लेने से मन पर चढ़ा मैल दूर नहीं होता। जिसके हृदय में दीन-दुःखियों के लिए करुणा नहीं, संवेदना नहीं, वो लाख प्रयत्न कर ले, पर उसे पुण्य नहीं, केवल पाप का भागी बनना पड़ेगा।" अध्यात्म का सार बाह्य क्रियाकलापों में नहीं, वरन आंतरिक परिष्कार में है।

अकेले चलने का साहस करें

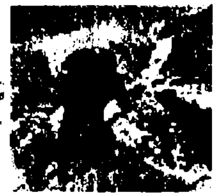

जो मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा होकर आगे बढ़ने की ठानते हैं, उनके कदमों को कोई नहीं रोक सकता है। इस संसार का सत्य है कि यदि हमें पूर्णत: निराशा से बचना है तो किसी पर भी निर्भर रहना छोड़ दें।

अपनी आत्मा को सशक्त बनाएँ तथा हर प्रकार की कठिनाई में अडिग रहना सीखें। जो ऐसा कर सका, उसे ही जीवन के सदुपयोग का अवसर मिल पाता है, उसकी आत्मा सदा प्रसन्न अनुभव करती है तथा उसे किसी प्रकार का शोक नहीं हो पाता।

जब तक हम दूसरों पर अवलंबित हैं, हमारी चेतना पूर्णत: स्वतंत्र नहीं तथा हम अपने दैवी अभियान हेतु तत्पर नहीं, तब तक हमारा जीवन अपने उत्कर्ष की प्राप्ति नहीं कर सकता है। हमें चाहिए कि हर प्रकार के पीड़ा-अवरोधों से परे अपने पथ का अनुसरण करें। इसी में आत्मा का कल्याण है। जो इसे समझ जाता है, उसे फिर भटकना नहीं पड़ता, उसकी आत्मा स्वत: ही अपने उद्देश्य के अनुरूप विचरण करने लगती है। मनुष्य की प्रतिभा के विकास में इससे बड़ी कोई कुंजी नहीं कि उसने आत्मनिर्भर होना सीख लिया, उसे अब कोई भी परिस्थिति अपने स्वरूप के अनुकूल बरतने से रोक नहीं सकती। उसका जीवन हर प्रकार के विषयों से मुक्त हुआ अपनी आदर्श स्थिति को प्राप्त करता है। अब उसे किसी बात की चिंता नहीं, उसके भीतर का साहस अपनी आत्मा के भाग्योदय हेतु उमड़ पड़ता है।

जब तक मनुष्य इस संसार के ही जंजाल में फँसा रहेगा, उसे वास्तविक जीवन-पथ दृष्टिगोचर न हो सकेगा। वह सदा एकत्व की धारा से दूर अपने व्यक्तिगत कुचक्रों में ही जा रमेगा। उसकी आत्मा कभी उस सौभाग्य के दर्शन नहीं कर सकेगी, जिसे चरितार्थ करने हम इस धरती पर आए हैं।

यदि हम जागरूक हो सकें तो समझ पाएँगे कि जीवन का सदुपयोग तभी संभव है, जब हम उसे आत्मा के दृष्टिकोण से स्वीकारें। उसकी सभी समस्याओं को एकमात्र भीतर के प्रकाश द्वारा सुलझाने का प्रयास करें।

जब आप ऐसा करने लगेंगे तो आपकी आत्मा बंधनों से मुक्त हो अपने उज्ज्वल दिशाक्रम को प्राप्त करेगी। यही अकेले चलने का अर्थ है। ❑

मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है। वह उत्थान और पतन में से किसी को भी चुन सकता है। स्वर्ग या नरक में से किसी भी दिशा में चल पड़ने के लिए पूरी तरह स्वतंत्र है। परिस्थितियों को दोष देना व्यर्थ है। वे तो मन:स्थिति के अनुरूप ही ठहरती और बदलती रहती हैं। दूसरों का न सही, परंतु अपना भविष्य निर्माण करने के संबंध में कोई बात अपनाना और किसी राह पर चलना पूरी तरह अपनी आकांक्षा और निर्धारण पर अवलंबित है।

—परमपूज्य गुरुदेव

विदेह होने की यात्रा

राजा जनक के दरबार में अक्सर ज्ञान-चर्चा हुआ करती थी, जिसमें बड़े-बड़े विद्वान भाग लिया करते थे। इसका कारण यह था कि राजा जनक स्वयं भी बड़े ज्ञानपिपासु और धर्मपरायण थे। एक बार ऋषिकुमार अष्टावक्र राजा जनक की सभा में पहुँचे।

राज दरबार में सुंदर-सुंदर शरीर वाले दरबारी लोग सुंदर-सुंदर आभूषणों से सुसज्जित होकर बैठे थे। उसी समय ब्रह्मज्ञानी अष्टावक्र जी पहुँचे। अष्टावक्र जी का शरीर 8 स्थानों से टेढ़ा था। अष्टावक्र जी के शरीर को टेढ़ा-मेढ़ा देखकर सभासदों को हँसी आ गई और अचानक सभा में हँसी के ठहाके गूँज उठे।

जिस सभा में ज्ञान की चर्चा के लिए आए हुए ज्ञानियों की उपस्थिति हो, ज्ञानियों की भरमार हो, उस सभा का किसी के शरीर की बनावट देखकर हँसना, ठहाके लगाना न सिर्फ अशोभनीय था, बल्कि घोर आश्चर्यजनक भी, पर ब्रह्मज्ञानी अष्टावक्र पर सभासदों के इस अनुचित व्यवहार का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

वे सभासदों के अशोभनीय व अपमानजनक व्यवहार से पूर्णतः अविचलित और अप्रभावित रहे और फिर सर्वदा ब्रह्म में रमण करने वाले ब्रह्मज्ञानी देहभाव में, शरीरभाव में रहते ही कहाँ हैं, जो शरीर की बनावट पर की गई टीका-टिप्पणी या हँसी-ठिठोली से वे विचलित हो सकें। ज्ञानियों के लिए, ब्रह्मज्ञानियों के लिए तो मान-अपमान, हर्ष-विषाद सब एक समान ही होता है।

अष्टावक्र राजा जनक की सभा में आए तो थे ज्ञान की चर्चा करने, पर सभासदों की हँसी का उत्तर उन्होंने और अधिक ठहाके की हँसी से दिया। अष्टावक्र को उतना जोर से हँसते देखकर राजा जनक ने पूछा—"महाराज! आप इतना जोर से क्यों हँस रहे हैं?"

अष्टावक्र ने कहा—"राजन्! यह प्रश्न तो मुझे करना चाहिए था।" राजा जनक ने पूछा—"क्यों?" अष्टावक्र ने कहा—"आप लोग मेरे पहुँचते ही हँसे थे।" उत्तर में राजा जनक ने कहा—"आपके टेढ़े-मेढ़े शरीर को देखकर सब हँस पड़े थे। आपको इसका दुःख नहीं मानना चाहिए।"

अष्टावक्र जी ने कहा—"इसमें दुःख मानने की बात ही क्या है? मुझे तो आप लोगों की हँसी-पर-हँसी आ गई थी। आप लोग सुंदर-सुंदर शरीर वाले और स्वर्णाभूषणों से सुसज्जित हैं, पर आप लोगों के सुंदर शरीर के भीतर कितनी कुरूपता है, दुर्बलता है, मलिनता है, दृष्टिहीनता है? उसे देख कर ही मुझे आप लोगों की हँसी पर और जोर की हँसी आ गई थी।"

मिथिला नरेश जिनकी सभा में ज्ञान की चर्चा हुआ करती हो और ज्ञान प्राप्त करने के लिए जिस नरेश ने डंका पिटवाया हो, उनके सभासद और

स्वयं वे भी शरीर के रूप, रंग और बनावट के प्रेमी हैं। उनके यहाँ फिर ज्ञान की महत्ता कहाँ? उनके यहाँ तो नश्वर शरीर के रूप, रंग और बनावट की महत्ता है।" राजा जनक ऋषिकुमार की बातें सुनकर चुप हो गए और सभासदों ने भी लज्जा से सिर झुका लिया।

राजा जनक ऋषिकुमार की यथाविधि सेवा-शुश्रूषा करके अपने शयनकक्ष में शयन करने चले गए, पर उन्हें नींद कहाँ? राजा जनक को तो ऋषिकुमार अष्टावक्र द्वारा कहे हुए वाक्य—"राजा जनक के यहाँ ज्ञान की नहीं, वरन नश्वर शरीर के रूप, रंग, बनावट की महत्ता है।" बेचैन कर रहे थे।

राजा जनक उसी समय उठे और तुरंत अष्टावक्र जी के पास पहुँचे और हाथ जोड़कर बोले—"ऋषिकुमार! मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि आप मुझे ज्ञान प्रदान कर सकते हैं, क्योंकि आप सचमुच ज्ञानी हैं, जो लोभ और भय से मुक्त हैं। सच्ची बात को पूर्ण निर्भीकता के साथ जो कह सकता है, वही उपदेश देने का अधिकारी है। सो हे ऋषिकुमार! मेरा चित्त उद्विग्न हो रहा है। अब आप अपने ज्ञानामृत से मुझे तृप्त करने की कृपा करें।"

राजा जनक की विनम्रता और ज्ञानपिपासा को देखकर अष्टावक्र ने हँसकर कहा—"राजन्! बिना गुरु-दक्षिणा दिए ही आप ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं? जिस ज्ञान की प्राप्ति हजारों वर्षों तक जंगलों की खाक छानने पर होती है, उसे आप धन के द्वारा खरीदना चाहते हैं?" तब पुनः राजा जनक ने विनम्र होकर कहा—"ऋषिकुमार! आप मेरा सारा खजाना ले लें और मुझे ज्ञान का उपदेश करें।"

ऋषिकुमार ने पुनः हँसकर कहा—"राजन्! राज्यकोष क्या आपका है, जो आप खजाना लेने-देने की बातें कर रहे हैं? कोष-खजाना तो प्रजा का है, वह तो प्रजा के हित में ही खरच किया जा सकता है?"

राजा जनक यह सुनकर लज्जित हो गए और पुनः कहने लगे—"अच्छा महाराज आप खजाना नहीं ले सकते तो आप सारा राज्य ही ले लें, और मुझे ज्ञानोपदेश करें।"

अष्टावक्र ने पुनः उत्तर दिया—"राजन्! राज्य अनित्य है, उसे लेकर मैं क्या करूँगा?" राजा जनक ने पुनः आग्रह किया—"यह मेरा शरीर ले लीजिए।" ऋषिकुमार ने पुनः कहा—"यह शरीर तो मन के अधीन है।" तब राजा जनक ने कहा—"तो आप 'मन' ही ले लीजिए।"

तभी अष्टावक्र स्वीकृति देते हुए बोले—"हाँ! मन ले सकता हूँ। आप मन को मुझे संकल्प कर दीजिए।" राजा जनक ने वैसा ही किया। अष्टावक्र ने कहा—"राजन्! मैं एक सप्ताह बाद पुनः आऊँगा तब आपकी इच्छा पूर्ण होगी।"

अष्टावक्र वहाँ से जाते समय राजा से कहते गए—"आप यह समझ लें कि आपने अपना मन मुझे दे दिया है। आपने अपना मन मुझे संकल्प कर के दिया है।"

राजा जनक प्रतिज्ञाबद्ध हो गए और उनकी दशा विचित्र हो गई। चलते-फिरते, खाते-पीते, हँसते-बोलते, सोते-जागते उनको यही ध्यान रहता कि मन तो संकल्प से गुरु का हो गया है और फलस्वरूप उनकी सारी क्रियाएँ शांत हो गईं। समयानुसार ऋषिकुमार लौटे और आते ही उन्होंने राजा जनक से कुशल-क्षेम पूछी।

आपके अधीन है। मेरा मन तो अब आपका हो चुका है। आपको मन देकर मैं अमन हो गया हूँ। मैं मन से रहित हो गया हूँ, मैं मन से मुक्त हो गया हूँ, मैं बिना मन का हो गया हूँ। मैं मन से परे हो गया हूँ। मैं कुछ करते हुए भी अकर्त्ता हो गया हूँ। मैं जड़वत् हो गया हूँ। मैं क्रिया करते हुए भी अक्रिय हो गया हूँ, पर मुझे इसी में परम शांति मिल रही है, अत: मैं शांत हूँ।''

अष्टावक्र ने कहा—''राजन्! अमन हो जाने के कारण तुम अब ज्ञान प्राप्त करने योग्य हो गए हो।'' अष्टावक्र आगे बोले—''राजन्! सांसारिक विषय मन के अधीन हैं आत्मा के अधीन नहीं। मन ही देही है, आत्मा विदेह है। मन जब तक शरीर की ओर लगा रहता है, तब तक मन की गति आत्मा की ओर नहीं हो पाती। प्राणी जब मन को ज्ञान के अधीन कर देता है, तब आत्मा की ओर उसकी गति बढ़ने लगती है और फिर धीरे-धीरे प्राणकोशों के बंधन से मुक्त होकर जीव सत्-चित्-आनंदस्वरूप बन जाता है। जीव सत्ता स्थापित होने पर आत्मा की प्राप्ति होती है। मन को ज्ञान से शुद्ध करके—परम ज्ञान की श्रद्धा स्थापित करके सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम की ओर बढ़ना ही जीव की 'परमोन्नति' है। राजा जनक! आपने मुझे अपना मन संकल्प कर दिया था, अत: अब मैं मन के साथ इस 'ज्ञान' को वापस कर रहा हूँ। आप मेरी आज्ञा से ज्ञान के अधीन होकर इस राज्य का संचालन कीजिए। समस्त जीवों में अपनी आत्मा का अनुभव कीजिए। संसार में रहिए, पर संसार से परे हो कर रहिए। देह में रहते हुए देह से परे होकर अर्थात विदेह रहिए।''

इतना कहकर अष्टावक्र जी वहाँ से उठकर चलने लगे। जनक ने विनय के साथ आग्रहपूर्वक कहा—''ऋषिकुमार! मुझे ज्ञान प्राप्त हो गया। आप यहीं रहें।'' अष्टावक्र जी ने हँसते हुए कहा—''राजन्! क्या आप मुझे अपने सुख-वैभव में बाँधना चाहते हैं?'' राजा जनक नतमस्तक हो गए और ऋषिकुमार अपने आश्रम की ओर चल पड़े। ❑

आसमान से गिरती बूँदों को देखकर नीचे जलती आग ने अट्टहास किया और बोली—''ये छोटी बूँदे मेरा भला क्या बिगाड़ेंगी?'' परंतु बूँदों ने अपना गिरना नहीं रोका।

एक के बाद एक बूँदें गिरती गईं और देखते-ही-देखते आग को बुझने को विवश होना पड़ा। समूह की सफलता संख्या से नहीं, सामूहिक संकल्प से सुनिश्चित होती है।

डॉल्फिनों का रोचक संसार

डॉल्फिन एक सुपरिचित एवं लोकप्रिय जीवों में से एक है, जो मनुष्य के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार, मस्तमौले अंदाज एवं चपलता के लिए जानी जाती है। इसे पालतू बनाकर लोग इससे तमाम तरह के करतब भी करवाते हैं। प्रस्तुत है इस प्यारे से जीव से जुड़ी कुछ रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक जानकारियाँ, जो शायद इस जीव के बारे में कुछ उपयोगी सोचने के लिए प्रेरित करें।

डॉल्फिन धरती पर विचरण करने वाले कछुए, मगरमच्छ एवं शार्क जैसे प्राचीन जीवों में से एक है। इसका मछली होने का भ्रम होता है, लेकिन यह एक ऊष्णरक्तीय स्तनपायी जीव है, जो मछलियों की तरह गलफड़ों से नहीं, बल्कि फेंफड़ों से साँस लेती है। इसीलिए इसको साँस लेने के लिए बराबर सतह पर आना पड़ता है।

डॉल्फिन झुंडों में रहना पसंद करती है, जिसे स्कूल या पॉड कहा जाता है—नर डॉल्फिन को बुल तथा मादा को काउ कहा जाता है। डॉल्फिन की सबसे प्रचलित और सुप्रसिद्ध प्रजाति बॉटलनोज डॉल्फिन हैं, जो अधिकांशतः मध्य से गरम सागर में तथा तटीय समुद्र में रहना पसंद करती हैं। छोटी डॉल्फिन जहाँ समुद्री तटों में रहना पसंद करती हैं तो वहीं बड़ी डॉल्फिनें महासागरों के गहरे पानी में दूर रहना पसंद करती हैं।

डॉल्फिनों को आहार तथा स्वच्छ जल तक की आसान पहुँच की आवश्यकता होती है, इसलिए आश्चर्य नहीं कि वे भोजन की तलाश में तथा शत्रुओं से बचने के लिए झुंडों में यात्रा करती हैं। ये एक मांसाहारी जीव हैं, जिनका मुख्य आहार मछलियाँ हैं, लेकिन गहरे सागर में रहने वाली डॉल्फिनें स्क्विड, जैली फिश आदि भी खाती हैं।

ये अपने दाँतों का उपयोग मांस को फाड़ने या शिकार को खाने के लिए नहीं, बल्कि मछली को पकड़ने के लिए करती हैं, ताकि वे उसे निगल सकें। एक बॉटलनोज डॉल्फिन के 80 से 100 तक दाँत होते हैं। इसके दो पेट होते हैं, एक में भोजन का भंडारण होता है और दूसरे में इनका पाचन। ये समुद्र का जल नहीं पीतीं, बल्कि भोजन से जल का उपयोग करके स्वयं को हाइड्रेट रखती हैं। एक डॉल्फिन एक दिन में 8 घंटे तक सोती है और 60 मील तक की दूरी तय करती है।

डॉल्फिनों की औसतन आयु 20 से 40 वर्ष होती है, जबकि कुछ प्रजातियाँ 50 वर्ष तक जीवित रहती हैं। नर की तुलना में मादा डॉल्फिनें अधिक आयु तक जीवित रहती हैं। बॉटलनोज मादा 60 वर्ष तक जीवित रह सकती है और 48 वर्ष तक बच्चों को जन्म दे सकती है। इसके सर के दोनों ओर एक-एक आँख होती है, जो एकदूसरे से स्वतंत्र होती हैं, जिस कारण डॉल्फिनें एक साथ आगे-पीछे और बगल में एक साथ देख सकती हैं तथा वे जल के ऊपर और नीचे, दोनों तरफ बहुत अच्छी तरह से देख सकती हैं।

जल के बाहर डॉल्फिनों की दृष्टि कुत्ते-बिल्ली जितनी अच्छी होती है। साथ ही डॉल्फिनों की श्रवणशक्ति मनुष्य से 10 गुना बेहतर होती है। इनका सोने का तरीका भी रोचक होता है। ये एक आँख खोलकर सोती हैं तब इनका आधा मस्तिष्क विश्राम करता है तथा आधा सक्रिय रहता है। इसलिए ये नींद में भी किसी तरह के खतरे के प्रति सचेत रहती हैं।

सोते समय प्रायः डॉल्फिनें जल की सतह पर बिना हिले-डुले विश्राम करती हैं, नियमित रूप से

साँस लेती हैं और आवश्यकता हो तो वे सतह के बहुत समीप धीरे-धीरे व स्थिर रूप से तैर सकती हैं।

डॉल्फिनें एक सुव्यवस्थित दिनचर्या का पालन करती हैं, जिसमें भोजन की तलाश, यात्रा करना, सामाजीकरण तथा विश्राम शामिल रहते हैं। इनका भोजन प्राय: प्रात: जल्दी तथा दोपहर के समय चरम पर होता है। सामाजिक व्यवहार इनकी दिनचर्या का एक बड़ा हिस्सा रहता है।

मादा डॉल्फिनों के नवजात बछड़े के लालन-पालन में झुंड की अन्य मादाएँ सहायता करती हैं और एक तरह से दाई की भूमिका निभाती हैं। डॉल्फिन का शिशु माँ के गर्भ में 11 से 17 माह तक रहता है। आपस में संवाद के लिए ये सीटी जैसी आवाज का उपयोग करती हैं और अपनी प्रसन्नता भी कुछ वैसे ही व्यक्त करती हैं।

डॉल्फिन वैसे एक बहुत कोमल एवं सहकारी जीव है, लेकिन कभी-कभी जब इसको क्रोध आता है, तो यह अपने जबड़ों से जोर से ताली बजाती है या अपनी पूँछ से पानी को थपथपाती है।

डॉल्फिनें की थूथन बहुत मजबूत और मोटी हड्डी की बनी होती है, जिसके मारक प्रहार से ये आवश्यकता पड़ने पर शार्क जैसी मछलियों के खतरे से स्वयं की रक्षा करती हैं। इनके अंदर घाव को तेजी से ठीक होने के गुण पाए जाते हैं, जिसके कारण इनके गहरे-से-गहरे घाव भी कम समय में ठीक हो जाते हैं।

डॉल्फिन हालाँकि एक जंगली जीव है, लेकिन इसको मनुष्य का मित्र माना जाता है और यह इनसान से दोस्ताना व्यवहार करती है। ऐसी घटनाएँ विरली ही होंगी, जब किसी डॉल्फिन ने जान-बूझकर किसी व्यक्ति पर हमला किया हो, बल्कि इनसान ही इसके सबसे बड़े हत्यारों में से एक है। बड़े-बड़े शार्क तथा किलर व्हेल इसके प्राकृतिक शत्रु हैं, जिनसे इसको खतरा रहता है।

डॉल्फिन को सबसे बुद्धिमान प्राणियों में से एक माना जाता है। व्हेल की तरह डॉल्फिन के मस्तिष्क में भी स्पिंडल न्यूरॉन्स नाम की विशेष कोशिकाएँ पाई जाती हैं, जो इन्हें पहचानने, स्मरण रखने, तर्क करने, संवाद करने, समझने, परिवर्तन के अनुकूल ढालने, समस्या के समाधान जैसी उन्नत क्षमताओं से संपन्न बनाता है।

इसी कारण डॉल्फिन एक बुद्धिमान जीव है और यह दर्पण में स्वयं को पहचान सकती है, जो क्षमता प्राय: अधिकांश प्राणियों में नहीं पाई जाती। समुद्र के अतिरिक्त डॉल्फिन नदियों में भी पाई जाती हैं।

अपने देश के ताजा पानी में दो प्रजाति की डॉल्फिनें मिलती हैं। इनमें एक इंडस डॉल्फिन और दूसरी गंगा और सहायक नदियों में मिलने वाली डॉल्फिन है। इंडस डॉल्फिन व्यास नदी में मिलती है; जबकि दूसरी डॉल्फिन गंगा, उसकी सहायक नदियों और ब्रह्मपुत्र में मिलती है।

नदियों में डॉल्फिनों की उपस्थिति वहाँ के जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के स्वस्थ-संतुलित होने का सूचक है। इस कारण भारतीय वन्य जीव संस्थान डॉल्फिनों के विशेष संरक्षण व अभिवर्द्धन के प्रयासों में लगा हुआ है।

इसके महत्त्व को देखते हुए भारत सरकार ने वर्ष—2009 में इन्हें राष्ट्रीय जलीय जीव घोषित किया था। वर्ष—2021 से इसके विधिवत् आँकड़े एकत्र किए जा रहे हैं, जो शीघ्र ही देशहित में जारी किए जाएँगे।

इसके साथ इनके अस्तित्व से जुड़े खतरे, चुनौतियाँ व इनके संरक्षण के संभावित प्रयासों पर भी प्रकाश पड़ेगा; जिनको ध्यान में रखते हुए सुधीजन इस प्यारे से जीव के संरक्षण-संवर्द्धन में अपना योगदान दे सकेंगे। ❑

वासना से नहीं, साधना से मिलता है संतोष

महाभारत में राजा ययाति की कथा का वर्णन है। कथा के अनुसार राजा ययाति भोग-विलास में आकंठ डूबे रहते थे। वासना की पूर्ति कर वह स्वयं को तृप्त और सुखी करना चाहते थे, पर भोगों को भोगते रहने के बावजूद भी वासना की इच्छा बनी ही रहती थी और उन्हें पूर्ण तृप्ति और सुख नहीं मिल पा रहा था।

वासना में डूबे रहने से उनके शरीर और मन की शक्तियाँ भी अब क्षीण हो चुकी थीं, पर मन की वासना ज्यों-की-त्यों बनी रही। उनके 100 पुत्र थे और अनेकों पत्नियाँ थीं, पर उनकी वासना कभी तृप्त नहीं हो पाई। वासना में डूबे रहने पर भी उनका मन तृप्त नहीं हो सका। उनका न राज-पाट में मन लगता था और न ही धर्म-कर्म में।

मन की गुलामी ने उन्हें इतनी बुरी तरह जकड़ा हुआ था कि कभी यह सोचने का भी अवसर न मिला की जीवन का प्रयोजन क्या है ? वासना को तृप्त कर स्वयं को तृप्त और सुखी बनाने के झूठे प्रलोभन में वे चंदन-वृक्ष जैसे अमूल्य तथा सुवास बिखेरने वाले जीवन को कोयला बनाकर-वासना की अग्नि में जलाकर राख कर रहे थे और होश तब आया, जब मृत्यु ने दरवाजे पर दस्तक दी।

उन्हें यमदेव का आदेश सुनाई पड़ा—"ययाति! तुम्हारी आयु पूरी हुई। अब तुम कर्मों की गठरी बाँधो और यमलोक चलने की तैयारी करो।" "पर इतनी जल्दी कैसे प्रभो! अभी तो मेरी सभी इच्छाएँ अधूरी हैं। अभी मैंने भोगा ही क्या है ?"—ययाति गिड़गिड़ाए।

भीतर की वासना याचना के रूप में मुखर हुई—"देव! मुझे जीवन दान देने की कृपा करें।" "ऐसा संभव नहीं है। हर व्यक्ति को निश्चित आयु भोगने के बाद यहाँ से विदा होना पड़ता है। यह तो सृष्टि का शाश्वत नियम है।"—यमदेव बोले। "पर आप तो समर्थ हैं देव! आप कुछ उपाय करें।"—ययाति के दीनता भरे स्वर पुन: गूँज उठे।

तब यम देवता ने परीक्षा लेने हेतु ययाति के समक्ष एक प्रस्ताव रखा—"हे राजन्! तुम्हारे तो सौ पुत्र हैं। उनमें से कोई यदि अपनी आयु-अपना यौवन तुम्हें देने को सहमत हो जाता है तो तुम अपने पुत्र के द्वारा दी गई आयु को कुछ और वर्षों तक जी सकते हो और मैं अभी यमलोक वापस लौट सकता हूँ।"

कामग्रस्त ययाति तो विवेकशून्य हो चुके थे, अस्तु उन्होंने यमदेव के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और उन्होंने अपने सभी पुत्रों को सामने बुलाया, निर्लज्ज होकर यौवन की भीख माँगी। वृद्धावस्था में भी अपने पिता की ऐसी मन:स्थिति को देखकर पुत्रों को भारी आश्चर्य हुआ और आक्रोश भी।

अन्य सभी पुत्रों ने तो अपनी आयु और यौवन देने से इनकार कर दिया, पर सबसे छोटा पुत्र अधिक विचारशील था और पितृभक्त भी सो उसे पिता की स्थिति पर ग्लानि हुई और दया भी आई। वह अपनी आयु राजा को देने को तैयार हो गया। यमदेव को उस छोटे किशोर के अद्‌भुत त्याग पर भारी अचरज हुआ और उन्होंने उससे असमय अपना सर्वस्व सौंपकर मृत्यु को गले लगाने का कारण पूछा।

किशोर ने कहा—"यह तो मेरे लिए सौभाग्य की बात है। सांसारिक भोगों की आसक्ति कितनी बुरी होती है, इसका परिचय तो मुझे पिताश्री की स्थिति देखकर ही हो चुका है। जब 100 वर्षों तक विषयों के भोग से भी राजा को तृप्ति न हो सकी तो मैं क्यों व्यर्थ में अपना जीवन गँवाऊँ ?" यमदेव ने उस बालक के वैराग्य से प्रसन्न होकर उसे जीवन-मुक्ति का आशीर्वाद दिया।

उधर 100 वर्षों के बाद यमदेव फिर राजा ययाति के पास पहुँचे। तब तक तो ययाति के सैकड़ों पुत्र और पैदा हो चुके थे। ययाति पुनः जीवनदान के लिए पहले की भाँति यमदेव के समक्ष गिड़गिड़ाए।" पैदा हुए बच्चों में से एक ने पुनः अपने त्याग का प्रमाण देते हुए अपनी आयु ययाति को भोग हेतु दे दी।

पौराणिक कथा के अनुसार इस प्रकार दस बार ययाति को अपने पुत्रों से जीवनदान मिला तथा वे हजार वर्ष तक जीवित रहे, विलास में निरत रहे, निमग्न रहे। अंतिम बार मृत्यु देवता (यमदेव) प्रस्तुत हुए तो ययाति ने पश्चात्ताप व्यक्त करते हुए कहा—"देव! मेरा जीवन व्यर्थ चला गया। पापों की गठरी सिर पर लिए मैं यह अनुभव करते हुए जा रहा हूँ कि भोगों से वासनाओं की तृप्ति कभी नहीं हो सकती।" उन्हें अंततः नरक के आतप में विक्षुब्ध हो अपनी नियत अवधि पूरी करनी ही पड़ी।

सचमुच वासना-को-वासना से न तो तृप्त किया जा सकता है और न ही समाप्त किया जा सकता है। अग्नि में घी डालने से अग्नि बुझती नहीं, बल्कि और अधिक धधकती है। अग्नि घी से नहीं प्रबल जलधार से ही बुझ सकती है।

वासना की अग्नि साधना से ही बुझ और मिट सकती है। निरंतर आत्मा में परमात्मा का ध्यान करते रहने से ही मन की वासना मिटती है और आत्मा से सत्-चित्-आनंदस्वरूप परमात्मा का परमानंद, ब्रह्मानंद निस्सृत होता है और जीव को पूर्ण तृप्ति, संतुष्टि, शांति और सुख की अनुभूति हो पाती है। समझदारी इसी में है कि हम वासना के बजाय साधना में निमग्न होकर शाश्वत सुख और शांति को प्राप्त करें और अपने जीवन को सफल बनाएँ। ❑

तेजाब जहाँ भी पड़ेगा, वहाँ जलाने या गलाने का क्रम चलाएगा। इसके विपरीत इत्र जहाँ भी रहेगा, वहाँ सुगंध फैलाएगा। कुविचार तेजाब की तरह हैं। वे जिस किसी के भी मन-मस्तिष्क में अड्डा जमा पाते हैं, उसी के लिए नए-नए जंजाल खड़े कर देते हैं। कहीं राग, कहीं रोष, कही छल-कपट, हर जगह तनाव, भय, अहंकार का वातावरण बना देते हैं। रंगीन चश्मा पहनने से सभी चीजें उसी रंग की दिखती हैं, परंतु वास्तव में वैसी होती नहीं हैं। चश्मा उतारते ही या चश्मा का रंग बदलते ही नजारे बदल जाते हैं। इत्र माहौल को सुगंधित बना देता है तो वहीं कोई तीव्र दुर्गंध रख दे तो माहौल दुर्गंधयुक्त हो जाएगा। —*परमपूज्य गुरुदेव*

सफलता प्राप्ति का राजमार्ग

जीवन में सफलता का एक निश्चित राजमार्ग है। यह एक दिशा में आशा, उत्साह एवं उमंग के साथ मन की स्थिरता एवं सुकून से भरी मन:स्थिति का नाम है, जो कई कारकों से मिलकर बनती है। इन कारकों के अभाव में सफलता संदिग्ध बनी रहती है। व्यक्ति किसी तरह से जीवन की पगडंडियों के सहारे कहने लायक कोई मुकाम हासिल कर भी ले, लेकिन सफलता की संतुष्टि से वंचित रहता है। सफलता के स्वर्णिम सूत्रों की चर्चा करने से पूर्व सफलता में बाधक तत्त्वों पर चर्चा करना उचित होगा, ताकि इनकी पहचान के आधार पर सफल जीवन की दिशाधारा तय की जा सके।

सर्वप्रथम यदि लक्ष्य स्पष्ट नहीं है तो जीवन की दिशा संदिग्ध ही रहेगी। ऐसे में कहने योग्य सफलता भी संभव न हो सकेगी; क्योंकि सफलता आसमान से टपककर हथेली पर गिरने वाली कोई वस्तु नहीं।

इसके लिए सुनियोजित ढंग से सचेष्ट प्रयास करने पड़ते हैं और यह अपनी कीमत माँगती है। बिना मूल्य चुकाए मिली सफलता का वास्तव में कोई अधिक मोल भी नहीं होता।

सफलता का एक कारक तत्त्व है, स्वयं के प्रति जागरूकता। आत्मजागरूकता के अभाव में सफलता संभव नहीं होती; क्योंकि जब तक व्यक्ति अपनी शक्तियों व कमियों से परिचित न हो, अपनी क्षमताओं से अनभिज्ञ हो तथा अपनी संभावनाओं के प्रति आश्वस्त न हो, तो सही लक्ष्य निर्धारण कैसे हो सकता है। इस तरह लक्ष्य के स्पष्ट न होने में आत्मजागरूकता का अभाव एक मुख्य कारण रहता है।

इसी कारण जीवन आलस्य-प्रमाद में कटता जाता है। आलस्य में जीवन खाते-पीते, मौज-मस्ती करते, सोते और दिवास्वप्न देखते हुए बेहोशी में बीत जाता है और हाथ कुछ लगता नहीं। ऐसे ही ज्वलंत ध्येय के अभाव में प्रमाद भी व्यक्ति को लक्ष्य-सिद्धि से वंचित रखता है।

रोज काम को टालते रहने की प्रवृत्ति प्रमाद के कारण ही बनती है। आलस्य-प्रमाद के कारण जीवन किधर जा रहा है, इसकी भी सुध नहीं रहती और जब होश आता है, तब तक काफी देर हो गई होती है।

इनका सम्मिलित प्रभाव जीवन में अनुशासन की कमी के रूप में पड़ता है। ऐसे में व्यक्ति की ईश्वरप्रदत्त शक्तियाँ यों ही व्यर्थ नष्ट होती रहती हैं। सफलता के लिए तन, मन व अंतरात्मा की क्षमताओं का जो सम्मिलित प्रयास अपेक्षित रहता है, वह अनुशासन के अभाव में संभव नहीं हो पाता। पानी को उबलने के लिए एक निश्चित तापमान की आवश्यकता रहती है, इसी तरह लक्ष्यसिद्धि में भी निश्चित उत्साह, पुरुषार्थ एवं अनुशासन की आवश्यकता रहती है, जिसके अभाव में व्यक्ति वांछित सफलता से वंचित रह जाता है।

आत्मसम्मान की न्यूनता एवं आत्मविश्वास की कमी इसके स्वाभाविक परिणाम होते हैं, जिसके कारण व्यक्ति स्वयं के प्रति स्वस्थ धारणा नहीं बना पाता। वह हीनता से ग्रस्त रहता है और नकारात्मक सोच का शिकार हो जाता है। सफल व्यक्तियों से आवश्यक प्रेरणा ग्रहण करने के बजाय अनावश्यक ईर्ष्या-द्वेष एवं दोषारोपण के भाव के कारण मन:स्थिति ऐसे में विषाक्त रहती है।

दृष्टिकोण में दोष के चलते ऐसे में जीवन भी दूषित हो जाता है। ऐसे में व्यक्ति अपने आप में कुछ इस कदर उलझ जाता है कि वह दूसरों को भी समझ नहीं पाता। किसी परिस्थिति के सम्यक मूल्यांकन एवं तदनुरूप सही निर्णय की क्षमता से भी चूकने लगता है।

दूसरों के साथ तालमेल का अभाव एवं कमजोर संवाद कौशल के कारण व्यक्ति पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में भी असफलता का दंश झेलने के लिए विवश—बाध्य होता है और सब मिलाकर व्यक्ति एक हारा हुआ जीवन जीने के लिए अभिशप्त होता है।

ऐसे में जीवन असुरक्षा, ईर्ष्या-द्वेष एवं भय के भाव से आक्रांत हो जाए तो कोई बड़ी बात नहीं। इससे भी आगे जीवन के अवसाद के गहन अँधेरे में खोने का खतरा रहता है और बहुमूल्य जीवन यों ही बरबाद होता हुआ प्रतीत होता है और एक असफल जीवन को जीते जाना व्यक्ति की नियति बन जाती है।

इस स्थिति से बाहर निकलने का मार्ग भी इसी अँधेरे से ही निकलता है। इसी के बीच दीपक जलाने के साहस के साथ सफलता की नई राह तलाशी जा सकती है।

इसके लिए सबसे पहले अपने जीवन का उद्देश्य खोजें। आपके जीवन में किन चीजों को लेकर उत्साह व रुचि है, आपका जीवनोद्देश्य क्या है, इसे तलाशें। अब इसी के इर्द-गिर्द अपने जीवन का लक्ष्य तय करें।

नित्य आत्मसमीक्षा करें। स्वाध्याय-सत्संग का सहारा लें। इनके प्रकाश में जीवन के उद्देश्य में नए प्रकाश का संचार होगा। इसमें नवीनता आएगी। जीवन लक्ष्य को और स्पष्ट करने के लिए विशेषज्ञों की राय ली जा सकती है।

यह आवश्यक है कि तय लक्ष्य स्पष्ट हो, व्यावहारिक हो, आपकी रुचि से जुड़ा हो, समाजोपयोगी हो, जिसको आप नियमित आधार पर हासिल कर सकते हों।

इसी के साथ जीवन की प्राथमिकताएँ तय करें व नित्यक्रम के आधार पर उन्हें हासिल करने की योजना बनाएँ तथा दिन भर इस पर टिके रहने का भरसक प्रयास करें।

रात को समीक्षा करें कि आज की उपलब्धि क्या रही व कहाँ चूक रह गई और अगले दिन के लिए नई कार्ययोजना बनाकर दुगने उत्साह के साथ मैदान में उतरें।

इस तरह जीवन स्वत: ही अनुशासन के दायरे में आ जाएगा। जीवन-दृष्टि में स्पष्टता के साथ जीवनशैली में भी निखार आएगा। आहार, विहार, विचार एवं व्यवहार के हर आयाम निखरने लगेंगे। जीवन तय मंजिल की ओर बढ़ रहा होगा और इन्हीं के साथ आत्मसम्मान का भाव पुष्ट होगा, आत्मविश्वास में वृद्धि होगी।

सकारात्मक, मानसिक सोच पनपेगी और जीवन में नूतन आशा-उत्साह का संचार होने लगेगा। सफलता जो पहले एक दिवास्वप्न जैसी लगती थी, अब जीवन की वास्तविकता प्रतीत होने लगेगी। अब दूसरों से प्रतिद्वंद्विता, द्वेष के बजाय सहकार एवं सहयोग के भाव विकसित होंगे और जीवन में समग्र सफलता की संभावनाएँ साकार होती दिखेंगी।

इसी के साथ भावनात्मक परिपक्वता का विकास होगा। आपसी समायोजन बेहतर होगा तथा संवाद कौशल में भी सुधार आएगा। आपसी संबंध-रिश्ते बेहतर एवं प्रगाढ़ होना प्रारंभ होंगे। कुल मिलाकर जीवन सफलता की नित नवीन सीढ़ियों पर चढ़ रहा होगा और अंतर सार्थकता के भाव के साथ ओत-प्रोत होगा।

असफलता को सफलता में रूपांतरित करने का यह एक निश्चित राजमार्ग है, जिसे अपनाकर कोई भी मनचाही सफलता का अधिकारी बन सकता है। ❑

गायत्री यज्ञ और सामाजिक क्रांति

गायत्री यज्ञ आंदोलन पू. गुरुदेव द्वारा भारत के ऐतिहासिक आंदोलनों में से एक है। उसकी विशालता का मूल्यांकन किया जाए तो दाँतों तले उँगली दबानी पड़ेगी कि किस प्रकार उसमें करोड़ों व्यक्तियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया और इन व्यवस्थाओं में किस प्रकार करोड़ों रुपयों की व्यवस्था संभव हुई, उस अभियान के अनेक आध्यात्मिक पहलू भी हैं, जो सूक्ष्मजगत् को अनुप्राणित करने से संबंध रखते हैं, पर एक प्रत्यक्ष पहलू सामाजिक क्रांति भी थी।

भारत की मूल समस्या सामाजिक है। राजनीतिक और आर्थिक समस्याएँ तो उसके साथ जुड़ी हुई हैं, यदि देश में से ऊँच-नीच, स्त्रियों को प्रतिबंधित करना, विवाह शादियों में होने वाले अपव्यय जैसी सामाजिक बुराइयों को दूर न किया जा सका तो देश का पिछड़ापन कभी दूर न होगा और राजनीतिक एवं आर्थिक प्रगति के बावजूद विकास की कोई संभावना साकार न होगी। कारण कि इस प्रकार की बुराइयों से जो क्षति निरंतर होती रहती है, उसे कितनी भी बड़ी विकास-योजनाएँ पूरा नहीं कर सकतीं।

जब क्षति-पूर्ति हमारे समस्त प्रयासों से संभव नहीं तो प्रगति की बात ही कहाँ से बनेगी? इस लक्ष्य को भली भाँति समझते हुए गायत्री यज्ञ आंदोलन के साथ उन्होंने सामाजिक क्रांति की व्यवस्था को गहराई तक जोड़कर रखा।

गायत्री मंत्र का मनुष्य मात्र को अधिकार दिए जाने की घोषणा करने से जब अछूत भी उसका उपयोग करने लगे तो पुरातनपंथियों में खलबली मच गई।

जो मंत्र ब्राह्मणों का था, कान में कहा-सुना जाने वाला था, उसे सब लोग प्रकट रूप से कहें-सुनें यह कैसा अनर्थ? यज्ञों में केवल ब्राह्मण लोग दक्षिणा लेकर आहुतियाँ देते थे। स्त्रियों को, अन्य वर्गों को उसमें प्रवेश मिलता ही नहीं था। उसमें सम्मिलित होने के लिए सबका खुला प्रवेश?

यज्ञ आयोजनों में आने वाले आगंतुकों को कच्ची रोटी (दाल, भात, रोटी) का प्रबंध और बिना जात-पाँत के भेदभाव के उनका बनाया और परोसा जाना, यह उन दिनों घोर आश्चर्य का विषय था। इस व्यवस्था को अनाध्यात्मिकता, नास्तिकता आदि न जाने किन-किन नामों से पुकारा जाता रहा।

पुरातनपंथियों ने उसका घोर विरोध किया। सभाएँ हुईं, लेख छपे, धर्मध्वजियों ने भाषण-वक्तव्य दिए, काले झंडे निकाले, नाश के नारे लगाए और सही-गलत जो कुछ भी हो सकता था, सब कुछ कहा गया। चर्चा फैलाई कि आचार्य जी ब्राह्मण नहीं, लकड़ी का काम करने वाले बढ़ई हैं और भी न जाने क्या-क्या कहा गया।

कई बार तो उन्हें शारीरिक आघात पहुँचाने और अपशब्द कहने तक के अवसर आए, पर क्या मजाल कि चेहरे पर जरा-भी उदासी आई हो। सामाजिक क्रांति का इतना बड़ा तूफानी अभियान खड़ा करने वाले में कितना दुस्साहस होना चाहिए, उसे देखना-नापना हो तो इस 110 पौंड भारी हाड़-मांस के पिंड में कितनी प्रचंड

दृढ़ता विद्यमान है, यह उनके समीप ही जाकर जाना जा सकता है।

यदि साहसी सैनिक की तरह उनके संघर्ष-प्रवृत्तियों का लेखा-जोखा लिया जाए तो पता चलेगा कि अन्याय और अनाचारों के विरुद्ध उनका प्रत्येक दिन ही लड़ने में बीता है, यदि वे संघर्षात्मक घटनाक्रम इकट्ठे किए जाएँ और उनमें मिली सफलता और सफलताओं, घावों और चोटों को गिना जाए तो लगेगा कि वे अनाचार से आजीवन कट-कटकर लड़ने वाले योद्धा के रूप में ही जन्मे है और शायद अंतिम साँस तक वे इस युद्ध में संलग्न रहते हुए प्राण त्यागेंगे।

संकल्प की पूर्ति के लिए किसी भी हद तक खतरों को सिर पर उठा लेने का उनका सहज स्वभाव है। सन् 60 में जब वे एक वर्ष के लिए अज्ञातवास गए थे तब गंगोत्तरी की भागीरथ शिला और उत्तरकाशी के परशुराम आश्रम के समीप रहना पड़ा। उन क्षेत्रों में शीत की प्रचंडता कई बार तो असह्य हो जाती है। सर्प, रीछ, व्याघ्र और दूसरे हिंसक जंतुओं से जीवन का संकट भी। एकाकी जीवन में भोजन तक की व्यवस्था तथा अनेक प्रकार की संभावित आशंका सूनेपन की नीरसता तथा ऊब—इन सब बाधाओं के रहते अपने मार्गदर्शक का बताया साधन क्रम करना ठहरा सो किया। डर तो उन्हें छू भी नहीं गया था। कठिनाइयों से अठखेलियाँ करने में न जाने कैसा मजा उन्हें आता था।

आत्मवेत्ता सिद्धपुरुषों के संपर्क में आने के लिए उन्होंने अति भयानक अगम्य वन-पर्वतों में कितनी दुस्साहस भरी यात्राएँ की हैं और जिन संकटों का सामना करते हुए क्या पाया है, इसकी चर्चा जब-तब उनके मुख से सुनने को मिलती तो यह लगता है दुर्बल अस्थि पिंजर वाले नगण्य-से दिखने वाले कलेवर में न जाने इतना अदम्य साहस किसने कहाँ से, कितना कूट-कूटकर भर दिया है। इन दिनों चल रही उनकी तपश्चर्या भी कम उग्र और कम रोमांचकारी नहीं है। ❑

राम और रावण के बीच युद्ध की तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थीं। विभीषण रावण के द्वारा अपमानित होकर निकाले जा चुके थे और वे भगवान राम को यथोचित सहयोग कर रहे थे। उनके मन में प्रश्न उभरा कि रावण की सेना में तो एक से बढ़कर एक बलशाली योद्धा हैं, उसके पास असंख्य रथ हैं और भगवान राम तो बिना किसी रथ के हैं तो पैदल रहकर वे कैसे रावण को हरा पाएँगे।

उनके प्रश्न पूछने पर भगवान मुस्कराए और बोले— ''*बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।* धर्मयुद्ध योद्धाओं और लकड़ी के रथ से नहीं, बल्कि धर्म के रथ से जीता जाता है। धर्म का रथ शौर्य और धैर्य दो पहियों पर चलता है। विवेक का बल, संयम और परोपकार उस रथ के घोड़े हैं और कृपा, क्षमा एवं समता उन घोड़ो को बाँधने वाली रस्सियाँ हैं। इस धर्मरूपी रथ पर जो सवार होता है, उसे कोई हरा नहीं सकता।'' यह सुनकर विभीषण श्रद्धा से भगवान राम के आगे अवनत् हो गए।

मीडिया प्रबंधन की भूमिका

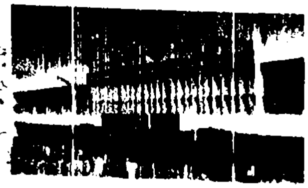

आधुनिक समय में विकास के बहुआयामी क्षेत्रों ने मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन को क्रांतिकारी रूप में परिवर्तित कर दिया है। संचार, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकों का अब प्रत्येक के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान हो गया है। अपने जीवन को प्रगतिशील और विकसित बनाने की प्रवृत्ति मनुष्य में प्रारंभ से ही मौजूद रही है और इसी के फलस्वरूप अद्यतन इतिहास में मानवीय सभ्यताओं ने नए-नए विकास के प्रतिमान स्थापित किए हैं।

आधुनिक युग में वैज्ञानिक तकनीकों और संचार माध्यमों ने इस प्रक्रिया को और ज्यादा तीव्र बनाकर पूरे विश्व समुदाय को ही एक गाँव के रूप में बदल दिया है। विश्व के किसी भी कोने की हजारों किलोमीटर की घटना की जानकारी कुछ ही क्षणों में तुरंत प्राप्त हो जाती है। व्यक्ति एवं समाज में जागरूकता और जानकारी फैलाने में संचार माध्यमों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

इन माध्यमों में प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, परंपरागत, इंटरनेट, सोशल मीडिया आदि हैं। इनके माध्यम से देश-दुनिया के विविध क्षेत्रों, संस्कृति, शिक्षा, रहन-सहन, वेश-विन्यास घटनाओं आदि की जानकारियाँ सहज प्राप्त हो जाती हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था में सरकारी, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक संस्था-संस्थानों द्वारा संचार माध्यमों को ही सबसे प्रभावी जनसंवाद एवं सूचना प्रसारण का माध्यम माना जाता है। अत: मीडिया का उपयोग और मीडिया प्रबंधन को अपनाया जाना उक्त सभी स्तरों पर महती आवश्यकता बन गया है।

चूँकि सामाजिक कल्याण से जुड़े संस्थानों एवं क्षेत्रों में भी अब व्यापक रूप से मीडिया का उपयोग किया जा रहा है—ऐसे में सामाजिक संस्थाओं में भी अन्य क्षेत्रों की भाँति मीडिया प्रबंधन की महत्त्वपूर्ण भूमिका तय हो गई है।

सामाजिक संस्थाएँ समाज के विभिन्न स्तरों सामाजिक कल्याण, विकास एवं उन्मूलन के उद्देश्यों को लेकर प्रयत्नशील रहती हैं। इन संस्थाओं के उद्देश्य की सफलता व्यापक रूप से जनजागरण व जनसंदेश पर निर्भर होती है तथा इनके द्वारा अपनाए जाने वाले संचार माध्यमों की उद्देश्य प्राप्ति में इनका सर्वाधिक योगदान रहता है, लेकिन संचार माध्यम भी तभी सार्थक-उपयोगी सिद्ध होते हैं, जब उनका प्रयोग सुव्यवस्थित एवं योजनाबद्ध तरीके से किया जाता है। इसी के निमित्त मीडिया प्रबंधन का सामाजिक संस्थाओं में भी प्रयुक्त करना अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है।

मीडिया प्रबंधन का सामाजिक संस्थाओं के क्रियाकलापों एवं उद्देश्यों पर किस प्रकार सकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा इससे संबंधित महत्त्वपूर्ण पहलू क्या है- इस अवधारणा को आधार बनाकर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में एक महत्त्वपूर्ण शोध अध्ययन का कार्य संपन्न किया गया है। यह शोध वर्ष—2019 में विश्वविद्यालय के पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग के अंतर्गत शोधार्थी आशुतोष कुमार दुबे द्वारा श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० स्मिता वसिष्ठ के निर्देशन में पूर्ण किया है।

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

इस शोध का विषय है—"**सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रबंधन की भूमिका—एक अध्ययन।'**

इस अध्ययन के उद्‌देश्य में शोधार्थी द्वारा जिन विशिष्ट पहलुओं को सम्मिलित किया गया है, वे हैं—

(i) सामाजिक संस्थाओं में मीडिया की भूमिका।

(ii) सामाजिक संस्था के उद्‌देश्यों को समाज में प्रसारित-प्रचारित करने हेतु मीडिया रणनीति।

(iii) मीडिया के आधुनिक संचार साधनों की उपयोगिता एवं सामाजिक संस्थाओं के प्रयोजन में भूमिका।

(iv) सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रभारियों तथा संस्था की प्रबंधन प्रक्रिया के समक्ष चुनौतियाँ।

(v) संस्था एवं मीडिया नीति का पारस्परिक तालमेल एवं समाज के बीच मीडिया प्रबंधन की प्रभावकारिता।

उक्त पहलुओं से स्पष्ट है कि यह शोध अध्ययन सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रबंधन की भूमिका, कार्य एवं प्रभाव से संबंधित है। प्रायोगिक एवं वर्णनात्मक विधि पर आधृत इस अध्ययन में शोधार्थी ने वैज्ञानिक रीति से प्रामाणिक तथ्यों का विश्लेषण कर सामाजिक संस्थाओं द्वारा मीडिया के माध्यम से प्रचार-प्रसार की रणनीति, संरचना एवं कार्यों के प्रभाव से होने वाले परिवर्तनों को शोध परिणाम के रूप में प्राप्त कर इनका विस्तारपूर्वक विवेचन प्रस्तुत किया है।

शोधार्थी द्वारा अपने इस अध्ययन के प्रायोगिक तथ्यों को प्राप्त करने के लिए देश के उत्तर भारत क्षेत्र से तीन राज्यों की कुल चार सामाजिक संस्थाओं का चयन किया गया। सामाजिक संस्थाओं के अंतर्गत वे संस्थाएँ आती हैं, जिनकी स्थापना सोसायटी पंजीकरण अधिनियम 1860 के अंतर्गत की गई है। ऐसी स्वयंसेवी संस्थाओं को गैरसरकारी संस्थाओं के नाम से भी जाना जाता है। इस अध्ययन में जिन चार संस्थाओं को चयनित किया गया है, वे हैं—

(i) भारत विकास परिषद्—यह दिल्ली प्रदेश की एक गैर सरकारी संस्था है।

(ii) हेस्को (हिमालयी पर्यावरणीय अध्ययन एवं संरक्षण संगठन)—यह उत्तराखंड राज्य के देहरादून जनपद स्थित संस्था है।

(iii) श्री भुवनेश्वरी महिला आश्रम—यह भी उत्तराखंड राज्य के टिहरी गढ़वाल जनपद स्थित संस्था है, और

(iv) संजीवनी सोशल वेलफेयर सोसायटी-यह उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित संस्था है।

ये चयनित संस्थाएँ समाज हित के लिए भिन्न-भिन्न भौगोलिक और सामाजिक स्थितियों में कार्य करती हैं।

ये संस्थाएँ सामाजिक विकास के अपने बहुआयामी उद्‌देश्यों व अपने आदर्शों को जनसमाज तक पहुँचाने व उनमें जागरूकता के लिए प्रचुर साहित्य लेखन तथा प्रचार-प्रसार के पारंपरिक साधनों के साथ-साथ आधुनिक संचार व जनसंचार माध्यमों का भी रणनीतिक उपयोग कर रही हैं। शोधार्थी द्वारा लॉटरी विधि द्वारा चारों संस्थाओं से कुल 45 लाभार्थियों का चयन कर उनका साक्षात्कार लिया गया, ताकि शोध के लिए प्रामाणिक आँकड़े प्राप्त किए जा सकें।

आँकड़ों को एकत्रित करने के लिए शोधार्थी द्वारा तीन अलग-अलग साक्षात्कार अनुसूची तैयार की गईं।

पहली साक्षात्कार अनुसूची में मीडिया प्रबंधन से जुड़े प्रश्नों को सम्मिलित किया गया। यह अनुसूची 5 भागों में वर्गीकृत कर तैयार की गई थी, जैसे—सूचनादाताओं का परिचयात्मक विवरण;

मीडिया गतिविधियों के संगठनात्मक स्वरूप से संबंधित प्रश्न; मीडिया रणनीति से जुड़े प्रश्न; मीडिया पदाधिकारी एवं उनकी कार्यपद्धति तथा मीडिया प्रबंधन के समक्ष चुनौतियों से संबंधित प्रश्न।

द्वितीय साक्षात्कार अनुसूची में सामाजिक संस्थाओं के मीडिया प्रबंधन के प्रभाव से जुड़े प्रश्न सम्मिलित किए गए, जिनके माध्यम से विषय-विशेषज्ञों की राय को प्राप्त किया गया।

इसी प्रकार तृतीय साक्षात्कार अनुसूची में भी मीडिया प्रबंधन की प्रभाविता से संबंधित प्रश्नों को सम्मिलित किया गया, जिनके माध्यम से सामाजिक संस्थाओं के कार्यक्षेत्रों के लाभार्थियों से प्रबंधन के प्रभाव संबंधी तथ्यों एवं जानकारियों को प्राप्त किया गया।

तथ्यों को प्रामाणिक रूप से प्राप्त करने के लिए शोधार्थी द्वारा स्वयं प्रत्येक उत्तरदाताओं के पास पहुँचकर उनसे प्राप्त जानकारी को लिपिबद्ध किया गया।

साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त आँकड़ों के अतिरिक्त शोध अध्ययन में अन्य माध्यमों से भी तथ्यों को प्राप्त किया गया जैसे—पुस्तकें, पत्रिकाएँ, शोधपत्र, लेख, विवरण, शोध ग्रंथ, केंद्र, राज्य व स्थानीय शासन तथा सामाजिक संस्थाओं के प्रकाशन, सार्वजनिक सांख्यिकीय आँकड़े, ऐतिहासिक ग्रंथ, सरकारी सूचना और जनगणना विवरण आदि। इसके साथ ही विभिन्न वेब साइटों का भी प्रयोग किया गया है।

अध्ययन में एकत्रित आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर शोध परिणाम के रूप में शोधार्थी ने यह पाया कि मीडिया प्रबंधन के प्रति उदासीन रहने वाली सामाजिक संस्थाओं की अपेक्षा मीडिया प्रबंधन को अपनाने वाली संस्थाएँ अपने सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति में क्रियान्वित कार्यों को प्रभावी रूप से जन-समाज तक पहुँचा पाती हैं अर्थात मीडिया प्रबंधन का सामाजिक संस्थाओं के उद्देश्य, गतिविधियाँ एवं प्रभाव के संदर्भ में सार्थक एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

इस शोध अध्ययन के निष्कर्ष रूप में जो महत्त्वपूर्ण बिंदु प्राप्त हुए हैं, वे निम्न हैं—

सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रबंधन एक प्रक्रिया के रूप में है, जिसका संबंध संगठनात्मक संरचना, मीडिया रणनीति, मीडिया पदाधिकारियों के दायित्व व प्रबंधन के समक्ष चुनौतियों से है। यहाँ सामाजिक हितों पर जनजागरण के लिए मीडिया माध्यमों का प्रबंधन एक विस्तृत मीडिया नीति के अंतर्गत किया जाता है। इनमें संगठन की संरचना के आधार पर मीडिया संबंधी कार्यों को वर्गीकृत कर लिया जाता है।

संस्थाओं में मीडिया पदाधिकारियों की नियुक्ति, प्रशिक्षण एवं कौशल संबंधी कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं एवं सोशल मीडिया से प्रसारित जनसंदेशों पर निगरानी व नियंत्रण रखा जाता है। संस्थाओं द्वारा अधिकृत पदाधिकारियों द्वारा पत्रकारवार्त्ता, मीडिया सामग्री एवं संदेश उपलब्ध कराए जाते हैं।

शोध निष्कर्ष में यह भी पाया गया कि मीडिया माध्यमों का उपयोग करने से संस्था के कार्यक्रमों की सूचना मिलने, संस्था की छवि निर्माण में और उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग मिलता है। विषय विशेषज्ञों की राय में भी यह पाया गया कि मीडिया प्रबंधन से सामाजिक संस्थाएँ अपने सामाजिक मुद्दों पर जागरूकता अभियान चलाने, संस्था के विचारों को जन-जन तक पहुँचाने और मीडिया संस्थाओं को इन अभियानों से जोड़ने में सफल हो रही हैं।

शोधार्थी द्वारा अपने शोध परिणामों के आधार पर सामाजिक संस्थाओं के लिए 'मीडिया प्रबंधन प्रक्रिया' का एक मॉडल भी प्रस्तुत किया है। इस मॉडल में मीडिया प्रबंधन की संपूर्ण प्रक्रिया को चार प्रमुख आयामों में वर्गीकृत कर उनसे संबंधित समस्त क्रियाकलापों को समन्वित कर प्रस्तुत किया गया है।

यह मॉडल सभी सामाजिक संस्थाओं के लिए लाभकारी एवं उपादेयी होने के साथ ही अन्य तरह के सरकारी एवं निजी संस्थानों के लिए भी उपयोगी है, जिनका कार्यक्षेत्र समाज हित एवं व्यापक स्तर पर जन सरोकार से संबंधित है।

यह शोध सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रबंधन की महत्ता एवं प्रभाव को दरसाने वाला एक अत्यंत सामयिक एवं उपादेयी प्रयास है। शोधार्थी का मत है कि वर्तमान समय में मीडिया प्रबंधन द्वारा सामाजिक संस्थाएँ अपनी समस्त गतिविधियों को और ज्यादा प्रभावी एवं व्यापक रूप में संचालित कर सकती हैं। इसके साथ सुझाव भी है कि मीडिया नीति एवं नियमों को ध्यान में रखकर तथा संख्या की छवि के अनुरूप ही इन माध्यमों में सामग्री प्रयुक्त की जानी चाहिए। सामाजिक संस्थाओं में मीडिया प्रबंधन के लिए यह महत्त्वपूर्ण अध्ययन है; क्योंकि व्यावसायिक क्षेत्र, राजनीतिक व अन्य पेशेवर क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली मीडिया रणनीति से सर्वथा भिन्न रणनीति एवं प्रबंधन-प्रक्रिया की आवश्यकता सभी सामाजिक संस्थाओं को है। इस दृष्टि से यह अध्ययन अत्यंत प्रभावी मार्गदर्शन एवं जानकारियाँ प्रस्तुत करता है। ❑

आरुणि उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु गुरुकुल से शिक्षा ग्रहण करके लौटे तो उन्हें अपने ज्ञान पर अहंकार हो गया। आरुणि को यह भाँपते देर न लगी। उन्होंने श्वेतकेतु को अपने पास बुलाया और उससे पूछा—"पुत्र! वह एक क्या वस्तु है, जिसे जानने के बाद और कुछ जानना शेष नहीं रह जाता।" श्वेतकेतु इसका उत्तर न दे सके। आरुणि बोले—"पुत्र! उसका नाम है सत्। सत् का ज्ञान होते ही अविद्या का आवरण हट जाता है।"

श्वेतकेतु को जिज्ञासा हुई। उन्होंने पूछा—"सत् को कहाँ पाया जा सकता है। आरुणि ने एक शक्कर की डली उठाई और पानी में डाल दी, फिर अपने पुत्र से पूछा—"जो डली दिखाई पड़ रही थी, वो कहाँ गई ?" श्वेतकेतु बोले—"आपने मेरी आँखों के सामने उसे घोला था, पर अब मुझे दिख नहीं रही है।"

आरुणि बोले—"पुत्र! परमात्मारूपी सत् भी इस सृष्टि में घुल गया है। जैसे हवा हमारे चारों ओर होकर भी दिखाई नहीं पड़ती, वैसे ही आत्मतत्त्व प्रकृति के गुणों से परे चला गया हो उसे जानने के लिए अपनी अंदर की दृष्टि विकसित करो, वही तुम्हें सही ज्ञान कराएगी।"

कर्मफल के त्यागी को प्राप्त होती है कर्मफल परिणाम से मुक्ति

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की बारहवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के ग्यारहवें श्लोक की व्याख्या इससे पूर्व की किस्त में की गई थी। इस श्लोक में श्रीभगवान कहते हैं कि देहधारी मनुष्य के द्वारा कर्मों का संपूर्ण त्याग असंभव है, अतः जो कर्मफल का त्याग करना जानता है, वही त्यागी है—ऐसा कहा जाता है। इस सूत्र में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि देहधारी मनुष्य के लिए कर्मों का संपूर्ण त्याग असंभव है; क्योंकि यह मानवीय शरीर भी तो कर्मफल का ही परिणाम है। शरीर, पूर्वकृत कर्मों का परिणाम है, इसलिए कर्मों का त्याग असंभव है, परंतु कर्मफल की इच्छा का त्याग संभव है। उसका त्याग होते ही राग-द्वेष का, सुख-दुःख का, प्रसन्नता-शोक का त्याग हो जाता है। बाहर का त्याग होने से मात्र परिस्थितियाँ बदलती हैं, परंतु कर्मफल-इच्छा में परिवर्तन नहीं होता।

जैसे मृत्यु हो जाने भर से मोक्ष नहीं मिल जाता, उसको प्राप्त करने के लिए कामना, वासना, आसक्ति का त्याग अनिवार्य होता है, वैसे ही जो कर्मफल की इच्छा का त्याग करते हैं, उनका त्याग ही, उनको सच्चा त्यागी बनाता है। साररूप में कहें तो यहाँ श्रीभगवान कह रहे हैं कि बाहर का त्याग वास्तव में त्याग नहीं, बल्कि भीतर का त्याग ही वास्तविक त्याग है। अगर कोई बाह्य परिस्थितियों को त्याग करके एकांत निवास भी कर ले तो वैसा करने से प्रकृति के साथ के संबंधों का त्याग नहीं होता। वो तभी होता है, जब आंतरिक त्याग जन्म लेता है और भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि उसे ही वास्तविक त्याग समझना चाहिए।]

इसके उपरांत योगेश्वर कृष्ण त्याग का अगला सूत्र अर्जुन को समझाते हुए उससे कहते हैं—

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्न्यासिनां क्वचित्॥ *12*॥

शब्दविग्रह—अनिष्टम्, इष्टम्, मिश्रम्, च, त्रिविधम्, कर्मणः, फलम्, भवति, अत्यागिनाम्, प्रेत्य, न, तु, सन्न्यासिनाम्, क्वचित्।

शब्दार्थ—कर्मफल का त्याग न करने वाले मनुष्यों के (**अत्यागिनाम्**), कर्मों का (तो) (**कर्मणः**), अच्छा (**इष्टम्**), बुरा (**अनिष्टम्**), और (**च**), मिला हुआ (**मिश्रम्**), ऐसे (**इति**), तीन प्रकार का (**त्रिविधम्**), फल (**फलम्**), मरने के पश्चात (अवश्य) (**प्रेत्य**), होता है (**भवति**), किंतु (**तु**), कर्मफल का त्याग कर देने वाले मनुष्यों के (कर्मों का फल) (**सन्न्यासिनाम्**), किसी काल में भी (**क्वचित्**), नहीं होता (**न**)।

अर्थात कर्मफल का त्याग न करने वाले मनुष्यों को कर्मों का इष्ट, अनिष्ट और मिश्रित—ऐसे तीन प्रकार का फल मरने के बाद भी होता है, परंतु

कर्मफल का त्याग करने वालों का नहीं होता है। इससे पूर्व के सूत्र में श्रीभगवान ने अर्जुन को यह स्पष्ट किया कि कर्मफल का त्याग ही वास्तविक त्याग है। इसमें वे यह स्पष्ट कर रहे हैं कि कर्मफल का त्याग करने वालों की और न करने वालों की मरने के बाद क्या गति होती है।

कर्म करने वालों को, फल की इच्छा से कर्म करने वालों को तीन तरह के कर्मफल प्राप्त होते हैं। इष्ट अर्थात जैसा चाहा था या यों कहें कि किए गए कर्म की इच्छा के अनुकूल फल की प्राप्ति एवं अनिष्ट अर्थात उसके प्रतिकूल फल की प्राप्ति। कुछ प्रतिफल ऐसे होते हैं, जिनमें अनुकूल एवं प्रतिकूल, दोनों मिले होते हैं।

उदाहरण के तौर पर यदि कोई कामना करे कि वो भारत के सर्वोच्च पद पर आसीन हो जाए और उसी के अनुरूप कर्मों को करे और उसके प्रयास सफल होकर उसको इच्छित परिणाम प्रदान कर दें तो वो अनुकूल या इष्ट परिणाम है, परंतु सर्वोच्च पद के मिलने पर व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन नगण्य रह जाता है; क्योंकि वो सर्वोच्च सार्वजनिक पद पर है तो यह एक तरह से प्रतिकूल परिणाम है। इस तरह से इसे मिश्रित प्रतिफल कह सकते हैं।

विवेकशीलों की दृष्टि से ये सब बंधन ही हैं। चाहे हम अनुकूल परिणाम को प्राप्त करके सुखी अनुभव करें या प्रतिकूल परिणाम को प्राप्त करके दु:खी अनुभव करें—ये वस्तुस्थिति में बंधन ही हैं। श्रीभगवान कहते हैं कि फलेच्छा का त्याग करके कर्म करने वालों को मरने के बाद भी कर्मफल नहीं भोगना पड़ता; क्योंकि उनके कर्म करने का आधार कर्मफल की इच्छा नहीं था—उसका त्याग तो वो पहले ही कर चुके थे।

यहाँ भगवान कहते हैं कि '**प्रेत्य भवति**' अर्थात जिन्होंने कर्मफल का त्याग नहीं किया है, उनको इष्ट, अनिष्ट और मिश्रित—ये तीनों कर्मफल मरने के बाद अवश्य मिलते हैं, परंतु ऐसा कहने का यह अर्थ नहीं है कि मरने के बाद कर्मों की परिणति मिलती है तो इसका अर्थ यह हुआ कि जीते जी नहीं मिलती।

भगवान श्रीकृष्ण ने ये कहने के साथ यह भी कहा है कि '**न तु सन्न्यासिनाम् क्वचित्**' अर्थात जो कर्मफल का त्याग कर चुके हैं, फलेच्छा का त्याग कर चुके हैं—उनको यहाँ और मरने के बाद भी कर्मफल नहीं मिलता। इससे प्रमाणित होता है कि कर्मफल का त्याग न करने वालों को मरने के बाद तो कर्म का प्रतिफल मिलता ही है—जीते जी भी मिल सकता है। (क्रमश:)

मोक्षस्य नहि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा।
अज्ञानहृदयग्रंथिनाशो मोक्ष इति स्मृतः॥

—शिवगीता

अर्थात मोक्ष किसी स्थान पर रखा हुआ नहीं मिलता और न उसे ढूँढ़ने के लिए किसी दूसरे गाँव को ही जाना पड़ता है। हृदय की अज्ञान-ग्रंथि का नष्ट होना ही मोक्ष कहा जाता है।

देव–डोलियों से दीप्त हुआ देव संस्कृति विश्वविद्यालय

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में पहली बार आयोजित 'देव-डोली समागम' ने एक ऐतिहासिक अध्याय का सूत्रपात किया। मृत्युंजय सभागार में संपन्न इस भव्य आयोजन का उद्देश्य उत्तराखंड की लोकसंस्कृति को पुनः जीवंत करना था। इस समागम में उत्तराखंड विधानसभा की माननीया अध्यक्ष श्रीमती ऋतु खंडूरी जी ने मुख्य अतिथि के रूप में अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज की व साथ ही प्रख्यात आध्यात्मिक गुरु स्वामी श्री ज्ञानानंद जी महाराज ने अपने ओजस्वी विचारों से सभा को प्रेरित किया।

इस ऐतिहासिक आयोजन का उद्घाटन देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी एवं पधारे गणमान्य अतिथियों के करकमलों से हुआ। अपने विचार व्यक्त करते हुए प्रतिकुलपति जी ने अपने भावपूर्ण शब्दों में बताया कि आज का दिन मात्र एक आयोजन नहीं, बल्कि ईश्वर की कृपा और आस्था का सजीव प्रमाण है।

उन्होंने कहा कि आत्मा के अंतिम शिखर की स्मृति दिलाने के लिए आज देवी-देवता स्वयं हमारे बीच पधारे हैं। यही गायत्री परिवार का परम लक्ष्य है—मनुष्य के भीतर देवत्व का उदय करना और उसे उसकी सर्वोच्च चेतना से जोड़ना। यह क्षण हमारी असीम कृपा और आस्था का अद्वितीय उदाहरण है। यह केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर के पुनर्निर्माण और हमारी आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सेतु है, जो उन्हें अपनी संस्कृति से जोड़ेगा। यह कार्यक्रम विश्वविद्यालय के आदर्श वाक्य संस्कृति से आध्यात्मिक उत्थान का जीवंत उदाहरण है।

समारोह में उत्तराखंड की अनमोल संस्कृति को सजीव रूप से प्रस्तुत किया गया, जिसमें देव-डोलियों का भव्य आगमन और पूजा-अनुष्ठान मुख्य आकर्षण रहे।

विदित हो कि कुछ समय पूर्व देव संस्कृति विश्वविद्यालय में मातृभूमि मंडपम और उसमें भारत माता की प्रतिमा का अनावरण होते ही देव संस्कृति विश्वविद्यालय ऐसा अनूठा स्थल बन गया है, जहाँ शौर्य दीवार, भारत माता और विशाल राष्ट्रीय ध्वज एक ही परिसर में स्थित हैं। इस अभूतपूर्व संकल्प के साथ देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने एक ऐतिहासिक कीर्तिमान स्थापित किया है, जो हरिद्वार और उत्तराखंड के लिए गौरव की बात है। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने इस ऐतिहासिक पहल पर कहा कि यह परंपरा इतनी विशेष है कि भविष्य में अन्य विश्वविद्यालय और संस्थान भी इसका अनुकरण करेंगे, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी।

उन्होंने आगे कहा कि हम अक्सर देखते हैं कि संस्थानों का अनावरण गणमान्य अतिथियों और प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा किया जाता है, लेकिन आज इस अनावरण का कार्य उन बच्चों के हाथों से हुआ है, जो भारत का भविष्य हैं। जिनका कल है, उन्हें ही आज की कहानी लिखने का अधिकार मिलना चाहिए। इस ऐतिहासिक घटना के साथ ही हरिद्वार और

उत्तराखंड का गौरव और भी बढ़ गया है; क्योंकि शौर्य दीवार, विशाल तिरंगा और भारत माता की प्रतिमा एक ही परिसर में स्थापित करने वाला देव संस्कृति विश्वविद्यालय अब एकमात्र ऐसा विश्वविद्यालय बन गया है।

इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री शरद पारधी जी और शांतिकुंज के व्यवस्थापक श्री योगेंद्र गिरि जी उपस्थित रहे। विगत दिनों इसी नवनिर्मित मातृभूमि मंडपम में देव संस्कृति व्याख्यानमाला के अंतर्गत 'शांति एवं सद्भाव' पर आधारित विचार संगोष्ठी का आयोजन सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। कार्यक्रम की शोभा बढ़ाने हेतु विशिष्ट अतिथियों के रूप में श्री मनु गौड़ जी (सामाजिक कार्यकर्त्ता) एवं डॉ० अशोक गोयल जी (अध्यक्ष, एसएल वर्ल्ड प्राइवेट लिमिटेड) की विशेष उपस्थिति रही। विचार गोष्ठी की अध्यक्षता प्रतिकुलपति जी ने की।

भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित संस्था स्पिक मैके के कार्यक्रम के अंतर्गत कुछ दिनों पूर्व देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उस्ताद विलायत खान जी के सुपुत्र श्री शाकिर खान जी का आगमन हुआ और प्रतिकुलपति जी से उनकी सप्रेम भेंट हुई। इसके पश्चात एकल सितार गायन के माध्यम से उन्होंने सभी श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में कुलपति श्री शरद पारधी जी उपस्थित हुए।

विगत दिनों एनिमेशन और वीएफएक्स विभाग ने देव संस्कृति स्टूडेंट्स क्लब के साथ साझेदारी में अंतरराष्ट्रीय एनीमेशन दिवस मनाया। इस उत्सव की शुरुआत प्रतिकुलपति जी द्वारा दीप प्रज्वलन के साथ की गई, जिसमें विभिन्न विभागों के शिक्षकगण भी उपस्थित थे। इस आयोजन में विभिन्न प्रतियोगिताओं और एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसमें छात्रों की कलात्मक क्षमताओं को प्रदर्शित किया गया।

इसमें अद्वितीय 3D परियोजनाओं और अभिनव कला का प्रदर्शन किया गया। छात्रों ने अपनी रचनात्मक क्षमताओं का प्रदर्शन करते हुए आज के डिजिटल युग में एनीमेशन के बढ़ते महत्त्व को उजागर किया।

श्रीकृष्ण राधिका के साथ गोलोकधाम में हैं। वे वह दृश्य देख रहे हैं, जिसमें कंस देवकी एवं वासुदेव को प्रताड़ित कर रहा है। मारने के लिए वह तलवार निकालता है।

राधिका ने कहा—"प्रभु! अब तो वह मारने ही जा रहा है, कुछ करिए।" श्रीकृष्ण हँसे। शेषनाग प्रकट हुए और कंस भाग गया।

बाद में श्रीकृष्ण ने देवकी के गर्भ से अवतार रूप में जन्म लिया। बड़ी विचित्र लगती है न यह कथा, पर यह सत्य है।

श्रीकृष्ण की लीला अपरंपार है। वे परमात्मतत्त्व रूप में हैं। जन्म, कर्म उनके दिव्य हैं। इस रूप में जानेंगे तो भक्ति बढ़ेगी एवं 'वासुदेवः सर्वमिति' का भाव बनेगा।

हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में विश्व मानसिक स्वास्थ्य माह का अंतिम दिवस अत्यंत प्रभावशाली रहा, जहाँ प्रेरणादायक सत्र का शुभारंभ प्रतिकुलपति जी के करकमलों द्वारा हुआ। अपने सारगर्भित उद्बोधन में उन्होंने आज के समय

में मानसिक स्वास्थ्य के महत्त्व पर प्रकाश डाला और छात्रों की उत्साही भागीदारी की सराहना की, जिन्होंने विभिन्न प्रेरणादायक गतिविधियों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया।

दिन की शुरुआत साइबर सुरक्षा कार्यशाला से हुई तो वहीं अभिनव हस्तकला गतिविधि ने मानसिक स्वास्थ्य चुनौतियों का सामना करने में एकता का प्रतीक प्रस्तुत किया। डूडलिंग गतिविधि में छात्रों की रचनात्मकता निखरी, जबकि 'धन्यवाद की दीवार' ने आभार और समर्थन का भावपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत किया। काउंसलिंग में व्यावहारिक चुनौतियों पर केंद्रित कार्यशालाओं ने प्रतिभागियों को महिलाओं और बच्चों के खिलाफ हिंसा और दुर्व्यवहार से निपटने के महत्त्वपूर्ण ज्ञान से सशक्त किया।

इस आयोजन में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों, दीपयज्ञ के साथ सायंकालीन एवं प्रात:कालीन ध्यान और एक शांतिमय सत्र का भी आयोजन हुआ, जिसमें आंतरिक शांति को प्रोत्साहित किया गया।

छात्रों की कलात्मक प्रतिभा पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता में प्रदर्शित हुई, जिसने इस महत्त्वपूर्ण माह के समापन को और यादगार बना दिया, जो मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता और मानसिक दृढ़ता को सशक्त करने के लिए समर्पित था।

इस दिन ने मानसिक और आत्मिक पोषण की गतिविधियों के माध्यम से समुदाय और मानसिक दृढ़ता की शक्ति का उत्सव मनाया और यह संदेश दिया कि मानसिक स्वास्थ्य को प्राथमिकता देना एक स्वस्थ और संतुष्ट जीवन की आधारशिला है।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कंप्यूटर विज्ञान विभाग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस केंद्र द्वारा 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में उभरते रुझान, प्रौद्योगिकियाँ और नवाचार' पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्देश्य विद्यार्थियों को एआई के तेजी से बदलते परिदृश्य के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदान करना था।

इस आयोजन का उद्घाटन देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने किया, जिन्होंने एआई के भविष्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका पर प्रेरणादायक उद्बोधन दिया। एआई केंद्र के प्रतिष्ठित वक्ताओं ने एआई में नवीनतम रुझानों और नवाचारों पर चर्चा की, साथ ही संस्थान में छात्रों के लिए उपलब्ध विभिन्न अवसरों को भी उजागर किया। इसके अलावा, एआई केंद्र के वर्तमान प्रशिक्षुओं ने अपनी परियोजनाओं का प्रदर्शन किया, जिससे छात्रों को एआई अनुसंधान और विकास के व्यावहारिक अनुप्रयोगों से सीधे अवगत होने का अवसर मिला।

कार्यशाला में एक व्यावहारिक दृष्टिकोण जोड़ते हुए, कंप्यूटर विज्ञान विभाग के एक पूर्व छात्र ने अपने स्टार्टअप सफर को साझा किया, जिससे एआई क्षेत्र में उद्यमिता की दिशा में बढ़ने को इच्छुक अगली पीढ़ी को प्रेरणा मिली। इसके साथ ही एआई केंद्र के प्रशिक्षुओं ने अपने कार्य प्रदर्शित किए, जिससे विद्यार्थियों को एआई

विषवृक्षोऽपि सम्वर्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्॥

—कुमारसंभव, 2/55

अर्थात अपने हाथ से आरोपित विषवृक्ष को भी काटना अनुचित है।

अनुसंधान और विकास के व्यावहारिक पहलुओं की झलक मिली।

इस कार्यक्रम में समूह चर्चा और सत्रों के माध्यम से सक्रिय सहभागिता भी शामिल थी, जिसने विद्यार्थियों को एआई की अवधारणाओं में गहराई से उतरने, नवोन्मेषी सोचने और भविष्य की संभावित परियोजनाओं पर सहयोग करने के लिए प्रेरित किया।

हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में 'सिक्योर आवर वर्ल्ड : डेटा सुरक्षा और डिजिटल जीवन की रक्षा' विषय पर दो दिवसीय साइबर सुरक्षा जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन भी किया गया। कंप्यूटर विज्ञान विभाग और देव संस्कृति स्टूडेंट्स क्लब के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित इस कार्यक्रम में 200 से अधिक छात्रों ने भाग लिया।

कार्यक्रम का उद्घाटन प्रतिकुलपति जी द्वारा किया गया। उन्होंने छात्रों को प्रेरित करते हुए कहा—"दुनिया को बदलने की शक्ति हमारे पास है। आप समाज को सही दिशा दिखा सकते हैं या उन्हें भटका सकते हैं। साइबर अपराध के प्रति जागरूकता फैलाना एक महत्त्वपूर्ण कदम है। अगर हम शक्तिशाली उपकरणों का सही उपयोग करेंगे, तो समाज की बेहतर सेवा कर सकते हैं।"

इस कार्यक्रम में पोस्टर मेकिंग, सुडोकू, वाद-विवाद और स्लोगन मेकिंग जैसी कई रोमांचक गतिविधियाँ आयोजित की गईं, जहाँ छात्रों ने अपनी रचनात्मकता और साइबर सुरक्षा के प्रति अपनी समझ का प्रदर्शन किया। यह कार्यशाला न केवल छात्रों को साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूक करने के लिए थी, बल्कि उन्हें डिजिटल दुनिया में नैतिक जिम्मेदारी के साथ आगे बढ़ने के लिए सशक्त बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण पहल भी साबित हुई।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान के साथ एक नई साझेदारी की घोषणा की, जिसके तहत एक समझौता पत्र (MoU) पर हस्ताक्षर किए गए।

यह साझेदारी वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी और शैक्षिक नवाचार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से की गई जो स्वास्थ्य, चिकित्सा, कृषि, जैव-विविधता

संतों का वेश धारण करके धूर्तता करने वालों का प्रचलन बढ़ गया तो श्रद्धालुओं ने एक संत के आगे गुहार लगाई और कहा—"प्रभु! बहुत से धूर्त भी संतों की तरह वस्त्र धारण किए भ्रमण कर रहे हैं। दोनों के मध्य अंतर कैसे निकाला जाए।"

उत्तर में संत बोले—"वत्स! अंतर अत्यंत सरल है। धूर्त सेवा करवाने के भाव से धर्मक्षेत्र में आते हैं और संत सेवा करने के भाव से। उनके व्यवहार पर नहीं, आचरण पर ध्यान दो तो असलियत सामने आ जाएगी।" पूछने वालों की जिज्ञासा का समाधान हो गया।

संरक्षण और अन्य क्षेत्रों में समाज की भलाई को बढ़ावा देने पर केंद्रित होगी। यह साझेदारी सेमिनार, कार्यशालाएँ और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करेगी, ताकि बौद्धिक आदान-प्रदान को बढ़ावा मिल सके और समुदाय की भलाई में योगदान दिया जा सके।

दोनों विश्वविद्यालयों की शक्तियों को एकत्र करके, यह साझेदारी शैक्षिक नवाचार को बढ़ावा देगी, जिसका लाभ छात्रों, शिक्षकों और समग्र समाज को मिलेगा। समझौता पत्र पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी और गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान के कुलसचिव श्री राजेश जोशी जी ने हस्ताक्षर किए।

अवगत हो कि कुछ दिनों पूर्व छत्तीसगढ़ सरकार के सहयोग से 10 विद्यार्थियों ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं शांतिकुंज में 3 महीने के प्रिंटिंग, पब्लिशिंग और डिजाइनिंग परिवीक्षा प्रशिक्षण कार्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा किया।

इस कार्यक्रम में विद्यार्थियों ने नई तकनीकी और कौशल के व्यावहारिक अनुभव को प्राप्त किया, जिससे उनकी रचनात्मकता और आत्मविश्वास में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। कार्यक्रम के समापन के अवसर पर प्रतिकुलपति जी के करकमलों द्वारा विद्यार्थियों को प्रमाणपत्र प्रदान किया गया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय परिभ्रमण के क्रम में उत्तराखंड के 6 जनपदों से आए 85 पुलिसकर्मियों के दल ने प्रतिकुलपति जी से शिष्टाचार भेंट की। ये सभी पुलिसकर्मी शिवालिक नगर, हरिद्वार में आयोजित सशस्त्र प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत योग विभाग द्वारा संचालित एक माह के विशेष योग प्रशिक्षण शिविर में प्रतिभागी रहे। योग प्रशिक्षण के अनुभव साझा करते हुए पुलिसकर्मियों ने इसे अपने व्यावसायिक जीवन और सेवा में सुधार हेतु एक उपयोगी साधन बताया।

कुछ दिनों पूर्व ब्रेंटफोर्ड, ओंटारियो, कनाडा से हॉलीवुड के प्रतिष्ठित फिल्म निर्माता श्री सचिन पटेल जी का देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन हुआ एवं प्रतिकुलपति जी से भेंट का क्रम संपन्न हुआ।

विगत दिनों बाल दिवस के अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में अल्फाबेट स्कूल के 65 नन्हे-मुन्ने विद्यार्थियों ने अपने शिक्षकों के साथ विश्वविद्यालय के शैक्षणिक और सांस्कृतिक स्थलों का अवलोकन किया साथ ही राजकीय विद्यालय, पौढ़ी, गढ़वाल का एक समूह भी विश्वविद्यालय आया था। उन्हें विभिन्न गतिविधियों से परिचित कराया गया और वे भी इस शैक्षणिक वातावरण का अनुभव लेकर काफी प्रसन्न हुए। भ्रमण के पश्चात सभी विद्यार्थियों को प्रतिकुलपति जी से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

हाल ही में दूरदर्शन दिल्ली की वरिष्ठ संवाददाता डॉ० सुयश शर्मा जी का देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन एवं प्रतिकुलपति जी से भेंट हुई। डॉ० सुयश शर्मा जी ने विश्वविद्यालय की शैक्षणिक, सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियों की सराहना की और विशेष रूप से उन प्रयासों की प्रशंसा की, जो विश्वविद्यालय युवा पीढ़ी के आध्यात्मिक एवं वैचारिक विकास के लिए कर रहा है।

विगत दिनों सिद्ध महामृत्युंजय शक्तिपीठ, मायड़, हिसार, हरियाणा के पीठाधीश्वर स्वामी सहजानंद सरस्वती जी देव संस्कृति विश्वविद्यालय पधारे। स्वामी जी ने विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी से भेंट कर उन्हें प्रयागराज महाकुंभ 2025 में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने स्वामी जी का स्वागत किया और इस महान धार्मिक आयोजन के लिए शुभकामनाएँ प्रकट कीं।

कुछ दिनों पूर्व देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड के राष्ट्रीय सेवा

योजना के क्षेत्रीय निदेशक श्री समरदीप सक्सेना जी और उत्तराखंड राज्य अधिकारी डॉ० सुनैना रावत जी का आगमन हुआ। आगमन के उपरांत दोनों विशिष्ट अतिथियों ने विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी से भेंट की। भेंटवार्त्ता के दौरान समाजसेवा के विभिन्न पहलुओं, विशेषकर राष्ट्रीय सेवायोजना के माध्यम से युवाओं की भागीदारी को और अधिक प्रभावी बनाने पर विचार-विमर्श हुआ।

हाल ही में छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव के जेएलएम गायत्री विद्यापीठ के 60 विद्यार्थियों का देव संस्कृति विश्वविद्यालय में शैक्षिक भ्रमण हेतु आगमन हुआ।

आगमन पश्चात सभी ने प्रतिकुलपति जी से भेंट कर आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन प्राप्त किया। विदित हो कि 2 दिवसीय शैक्षणिक भ्रमण में समस्त विद्यार्थियों ने शांतिकुंज एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों और शैक्षणिक कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी प्राप्त की।

इसी क्रम में इफकॉन इंडिया ग्रुप के निदेशक श्री रजत मिश्रा जी का हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन एवं प्रतिकुलपति जी से भेंट का क्रम संपन्न हुआ।

मुलाकात के दौरान इफकॉन इंडिया और देव संस्कृति विश्वविद्यालय के बीच संभावित सहयोग के अवसरों पर भी चर्चा हुई, जिससे भविष्य में ऐसी साझेदारियों का मार्ग प्रशस्त हो सकता है, जो शिक्षा और उद्योग दोनों के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकें।

कुछ दिनों पूर्व डॉ. रोलैंड जी, जो जर्मनी के एक प्रतिष्ठित पर्यावरण विशेषज्ञ हैं, वे भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में पधारे। अपने इस आगमन के दौरान उन्होंने प्रतिकुलपति जी के साथ बैठक की, जिसमें उन्होंने पर्यावरणीय चिंताओं पर चर्चा की।

विदेश से आने वाले विशिष्ट अतिथियों के क्रम में बेलारूस के 12 प्रतिनिधियों का एक समूह देव संस्कृति विश्वविद्यालय में पाँच दिवसीय कार्यशाला के लिए पहुँचा। उनके आगमन पर विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी द्वारा उनका स्वागत किया गया।

साथ ही वियतनाम की योग फेडरेशन अध्यक्षा श्रीमती वू होंग येन जी का भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन हुआ, जहाँ उनका स्वागत प्रतिकुलपति जी द्वारा किया गया। अपनी मुलाकात में श्रीमती येन जी ने विश्वविद्यालय के दूरदर्शी शैक्षिक दृष्टिकोण और सामाजिक उन्नति में इसके अद्वितीय योगदान की गहरी सराहना की।

इसी क्रम में म्यांमार और उज्बेकिस्तान से छह मेहमानों का एक प्रतिनिधिमंडल विश्वविद्यालय पहुँचा, जहाँ उनका स्वागत प्रतिकुलपति जी ने किया। उनकी भेंट का उद्देश्य विश्वविद्यालय के अद्वितीय

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु-
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेच्छम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा-
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

अर्थात नीति-निपुण लोग निंदा करें या स्तुति करें, लक्ष्मी आए या अपनी इच्छानुसार चली जाए, आज ही मृत्यु हो जाए अथवा युग के अंत में हो— धीर पुरुष उचित मार्ग से अपने पैरों को नहीं हटाते अर्थात किसी भी स्थिति में विचलित नहीं होते।

दृष्टिकोण को समझने पर केंद्रित था, जिसमें आध्यात्मिकता को आधुनिक शिक्षा के साथ एकीकृत करने की दिशा और इसके वैश्विक सौहार्द और सामाजिक उत्थान में योगदान को प्रमुखता दी गई। प्रतिनिधिमंडल विशेष रूप से संस्थान के उस दृष्टिकोण से प्रभावित हुआ, जिसमें प्राचीन ज्ञान को समकालीन ज्ञान के साथ जोड़ने की बात की गई है।

कुछ दिनों पूर्व आयुर्वेद दिवस के अवसर पर हंगरी से 10 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल का विश्वविद्यालय में स्वागत किया गया। इस विशेष अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने मेहमानों के साथ योग और आयुर्वेद के विभिन्न पहलुओं पर एक गहन चर्चा की।

विश्वविद्यालय की विविध गतिविधियों, उपलब्धियों और सामाजिक कल्याण के लिए किए गए प्रयासों से भी परिचित कराया गया, जिससे वे गहरे प्रभावित हुए।

हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के भारतीय शास्त्रीय संगीत विभाग की छात्रा प्रतिभा गुप्ता के द्वारा युवा महोत्सव में युग गायक होने का वर्चस्व प्रदर्शित किया गया। प्रतिभा द्वारा जनपदस्तरीय प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने के पश्चात राज्यस्तरीय युवा महोत्सव में एकल शास्त्रीय गायन प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर गायत्री परिवार की कला शक्ति का प्रदर्शन किया गया। तत्पश्चात माननीय राज्यपाल महोदय द्वारा भी उन्हें पुरस्कृत किया गया। विदित हो कि प्रतिभा का चयन राष्ट्रीय स्तर पर हुआ है।

इस अवसर पर प्रतिभा ने प्रतिकुलपति जी से सफलता हेतु शुभकामनाएँ प्राप्त कीं। इसी के साथ देव संस्कृति विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने हाल ही में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन से विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाया। चितकारा विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ में हुए 'उड़ान मीडिया फेस्ट' में जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग के विद्यार्थियों ने 5 ट्रॉफियाँ हासिल कर 3 प्रथम और 2 द्वितीय स्थान प्राप्त किए।

फोटोग्राफी, आरजे हंट, और सेल्फ 'द्व'(सेल्फी) में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ, जबकि न्यूज़ फ्लैश और मोबाइल पत्रकारिता में दूसरा स्थान हासिल किया।

इसके साथ ही, विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने गीता विश्वविद्यालय, पानीपत में आयोजित वॉलीबॉल प्रतियोगिता में भाग लेकर अपनी खेल प्रतिभा और कौशल का अत्यंत बेहतरीन प्रदर्शन किया।

इसी के साथ देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिभाशाली 35 विद्यार्थियों ने एक बार पुनः अपनी उत्कृष्टता का प्रमाण देते हुए उत्तराखंड संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित खंडस्तरीय युवा महोत्सव में अद्वितीय प्रदर्शन कर विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाया।

विभिन्न श्रेणियों में विद्यार्थियों ने अपनी कला और कौशल से निर्णायकों और दर्शकों को मंत्रमुग्ध करते हुए श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किए, यथा लोकनृत्य में प्रथम स्थान, समूह लोकगीत में द्वितीय स्थान, एकल लोकगीत में प्रथम और द्वितीय स्थान, एकांकी नाटक में द्वितीय स्थान एवं भाषण में प्रथम स्थान।

इस ऐतिहासिक विजय के उपरांत विद्यार्थियों ने प्रतिकुलपति जी से भेंट कर उनका स्नेहपूर्ण आशीर्वाद प्राप्त किया। प्रतिकुलपति जी ने विद्यार्थियों की इस अद्वितीय सफलता की प्रशंसा करते हुए उन्हें उज्ज्वल भविष्य के लिए अपना आशीर्वाद प्रदान किया।

कुछ दिनों पूर्व देव संस्कृति विश्वविद्यालय में माननीय सह-प्रांत संघचालक डॉ. गजेंद्र जी, सह-क्षेत्र कार्यवाह श्री विनेश जी, प्रांत प्रचारक श्री उमेश जी, सह-प्रांत प्रचारक श्री आशीष जी, प्रांत कार्यवाह श्री राजेंद्र जी, सह प्रांत कार्यवाह श्री विनायक जी एवं भारतीय जनता पार्टी के समन्वयक श्री विवेक सिंह जी का आगमन हुआ।

इस विशेष अवसर पर विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने सभी अतिथियों का आत्मीय स्वागत करते हुए उन्हें देव संस्कृति विश्वविद्यालय की अद्वितीय शिक्षा-प्रणाली 'शिक्षा एवं विद्या' की अवधारणा से अवगत कराया।

उन्होंने बताया कि यह विश्वविद्यालय परमपूज्य गुरुदेव के सपनों का विश्वविद्यालय है, जहाँ शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों को जीवन के मूल्यों, संस्कारों और नैतिकता का भी पाठ पढ़ाया जाता है। यहाँ बच्चों को केवल शैक्षिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि आत्मनिर्माण, चरित्रनिर्माण और समाज के प्रति उत्तरदायित्व का बोध भी कराया जाता है। यह भेंट शिक्षा और संस्कारों के माध्यम से समाजनिर्माण के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को और भी सुदृढ़ करती है।

तदोपरांत पधारे सभी अतिथियों ने विश्वविद्यालय एवं गायत्रीतीर्थ—शांतिकुंज का भ्रमण किया एवं चल रही सभी सृजनात्मक गतिविधियों की सराहना की।

यह भी प्रशंसा का विषय बता दें कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय की 3 एनसीसी कैडेट्स का चयन प्रतिष्ठित गणतंत्र दिवस परेड में उत्तराखंड निदेशालय का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया गया। उत्तराखंड निदेशालय से आईजीसी आरडीसी शिविर में भाग लेने वाले 500 से अधिक कैडेट्स में से 144 कैडेट्स का चयन किया गया, जिनमें ये तीनों शामिल थे। इन्हें प्रतिकुलपति जी से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जहाँ उन्होंने इनके अब तक के शानदार प्रदर्शन और इनके उज्ज्वल भविष्य के लिए अपनी शुभकामनाएँ दीं। ❑

शिष्यों ने गुरु से प्रश्न किया—''महापुरुष किस कारण से भारतीय संस्कृति को आदर्शनिष्ठ बताते रहे हैं?'' गुरु बोले—'' श्रेष्ठ पुरुषों को रामचरितमानस में तीर्थराज की संज्ञा दी गई है। उस तीर्थ की तीन धाराएँ कही गई हैं—

राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा।
सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा॥
बिधि निषेधमय कलि मल हरनी।
करम कथा रबिनंदनि बरनी॥

''गंगा की धारा ईश्वरभक्ति के रूप में, सरस्वती की धारा उच्च चिंतन के रूप में तथा सत्कर्म के रूप में यमुना की धारा। भारतीय संस्कृति की यह त्रिवेणी साधकों को आदर्शनिष्ठ बनाती रही है और उसी आधार पर यहाँ महापुरुष बनते रहे हैं।''

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

समझदारों की नासमझी (उत्तरार्द्ध)

परमवंदनीया माताजी के उद्‌बोधनों की यह मौलिकता है कि वे व्यक्ति के अंतर्मन को झकझोरते भी हैं और साथ ही साधकों-याजकों-शिष्यों को एक उत्कृष्ट पथ का पथिक बनने के लिए प्रेरित भी करते हैं। अपने एक ऐसे ही विशिष्ट उद्‌बोधन में परमवंदनीया माताजी सभी को चेताती हैं कि वर्तमान समय समझदारों की नासमझी का है। जिन्हें आगे बढ़कर समाज को नई दिशा दिखानी थी, नई चेतना प्रदान करनी थी—वे अपने उद्‌देश्य को भूलकर कुछ और करते दिखाई पड़ते हैं। वे सभी गायत्री परिजनों को पूज्य गुरुदेव के आडंबररहित जीवन से प्रेरणा प्राप्त करने को कहती हैं तो वहीं उन्हें परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करने के लिए प्रेरित भी करती हैं। वे सभी को स्मरण दिलाती हैं कि सच्चा अध्यात्म क्या है और पूज्य गुरुदेव की संतान होने के नाते हमें कैसा जीवन जीने की आवश्यकता है। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को..........।

आडंबर के विरोधी थे गुरुदेव

गुरुदेव सभ्य-शालीन इतने थे कि हर व्यक्ति उनकी सादगी को मान देता था। बनावटीपन ज़रा भी नहीं था। एक बार गोरखपुर गए थे तो पोद्दार जी ने पूछा—यह बताइए पंडित जी! आपकी कितनी पत्रिका निकलती हैं तो बता दिया की कितनी निकलती हैं। नहीं साहब! ऐसा नहीं लगता, खैर आपकी निकलती होंगी। तो उन्होंने कहा कि आपको विश्वास नहीं होता तो रहने दीजिए, इसमें क्या बात है, थोड़ी निकलती होंगी, लेकिन आपके पहनावे और भाव से, आपकी सादगी से, आपके बिस्तर से ऐसा नहीं लगता कि आपकी पत्रिका इतनी निकलती होंगी। तो गुरुजी ने एक बात कही।

उन्होंने कहा कि आडंबर पर मुझे कतई विश्वास नहीं है। मैं जैसा हूँ, वैसा ही हूँ। आप तो अपना बिस्तर कंधे पर रख करके आए हैं। हमेशा वो थर्ड क्लास में चलते थे। लोग फर्स्ट क्लास का टिकट कराते थे कि गुरुजी! हम आपके लिए फर्स्ट क्लास का टिकट कर रहे हैं। दो-चार जगह तो जरूर जहाँ मैं गई हूँ, वहाँ तो जरूर हुआ है, अभी-अभी 4-5 बार गई हूँ; क्योंकि मुझे बीड़ी, सिगरेट, मीट, प्याज की गंध नहीं सुहाती है। अब गाड़ी में कोई खाएगा, कोई पिएगा तो कोई किसी को रोक लेगा क्या? और उनका स्वभाव तो यह था कि कोई खा रहा है तो खाए और पिए तो पिए, पर अपनी तो जान निकल जाती है। तो फिर दो-दो सीटों का जो कूपन होता है, उससे वो सफर करते थे कि भाई! माताजी की दशा खराब हो जाएगी और जब तक यह पहुँचेंगी, तब तक तो इनका आधा ढेर हो जाएगा, अब तो मैं कहती नहीं हूँ।

गुरुदेव से सीखें

आप उनकी सादगी से शिक्षा लेना, उनके विचारों से शिक्षा लेना, उनके रहन-सहन से शिक्षा लेना, उनकी त्याग-तपस्या से शिक्षा लेना। तभी तो उनकी जबान पर सरस्वती थी कि जो भी कह दिया, सच्चे मन से किसी के सिर पर हाथ रख दिया तो पूरा हुआ। मैं समझती हूँ पचहत्तर परसेंट तो सही हुआ और पच्चीस फीसदी तो भाई अपने-अपने प्रारब्ध भी हैं, प्रारब्ध को तो कोई नहीं टाल सका।

दशरथ के प्रारब्ध को राम नहीं टाल सके, तो फिर हम कैसे टाल सकते हैं। कृष्ण अपने भानजे अभिमन्यु की मृत्यु को नहीं रोक सके तो सुभद्रा ने रोते हुए कहा था—"भैया मेरा तो यह सर्वनाश हो गया। मेरा तो इकलौता बेटा था, जो चला गया। तू तो भगवान है, तुझसे क्यों नहीं रोका गया?" उन्होंने कहा—"मैं भगवान जरूर हूँ, इसमें कोई दो राय नहीं है पर कर्मफल सभी को भुगतना पड़ता है। तेरा बेटा गया है और मेरे लिए भी जंग लगा तीर रखा हुआ है; क्योंकि मैं जब राम था तो मैंने सात पेड़ों के बीच में से बाली को मारने के लिए तीर चला दिया था, तो वही तीर मेरे लिए भी रखा है। हर व्यक्ति को कर्मफल भोगना ही पड़ता है, उसके लिए दृढ़ता की जरूरत है; मनोबल की जरूरत है।"

परिस्थितियों का मुकाबला करें

परिस्थितियों के साथ मुकाबला करना हर व्यक्ति का कार्य है। जो भी परिस्थितियाँ आएँ, अच्छी भी आती हैं बुरी भी आती हैं। अच्छा व्यक्तित्व होगा तो ऊँचे उठते हुए चले जाएँगे, खराब व्यक्तित्व होगा तो निचाई की ओर चलते हुए चले जाएँगे। सारे अंतरिक्ष में सूक्ष्म विचार ऐसा फैला हुआ है कि हम चाहे जो बन सकते हैं, डकैत भी बन सकते हैं, जेबकतरे भी बन सकते हैं, हम बुरे-से-बुरे व्यक्ति बन सकते हैं और अच्छे-से-अच्छे व्यक्ति बन सकते हैं।

बनने का साहस भी हमारे अंदर है कि हम क्या बन सकते हैं। इसके लिए थोड़ा त्याग करना पड़ता है, अपने मनोबल को तैयार करना पड़ता है, अपने मस्तिष्क को तैयार करना पड़ता है और दुनिया में जो भी बहाव होता है, उस बहाव से हमें हट करके चलना पड़ता है।

आचार्य विनोबा भावे के बड़े भाई बालकोबा एक बार क्षयग्रस्त हुए। दोनों फेंफड़े सड़ गए।

गांधी जी ने उनको प्राकृतिक उपचार बताया। अच्छे हो गए तो उन्होंने जीवन लौट आने पर शेष आयु को बापू के आदेश पर खरच करने का निश्चय किया।

गांधी जी ने उन्हें उरुलीकाँचन का प्राकृतिक चिकित्सालय चलाने के लिए भेज दिया और कहा—"जिस उपाय से आपके प्राण बचे हैं, उसी पर अन्य लोगों को भी चलाकर उनकी सेवा कीजिए।"

बालकोबा ने वही किया। जीवन भर प्राकृतिक चिकित्सा के माध्यम से लोगों को नया जीवन देने एवं जीवन जीने की कला सिखाने में वे निरंतर लगे रहे।

जिस तरीके से मछली बहाव की विपरीत धारा को चीरकर अपना रास्ता बनाती हुई चली जाती है। जो सामाजिक प्राणी है, जो सेवा करने वाला है, जो संत के पदचिह्नों पर चलने वाला है, उसको अनेक कठिनाइयाँ आ सकती हैं, पर हम कठिनाइयों के साथ हँसते-खेलते जूझेंगे।

सबको प्यार बाँटें

न हमें किसी से लड़ाई करनी है, न किसी को मारना है, न पीटना है, हमें तो अपने विचारों को, ईश्वरीय प्रेरणा को घर-घर पहुँचाना है। जिस तरीके से ये नन्हे-नन्हे दीपक जल रहे हैं, उसी तरीके से आपको एक दीपक के तरीके से जलना है। दीपक में जो तेल पड़ा है, जो बाती पड़ी है, उसमें तेल माने स्नेह होता है, प्यार होता है। यही प्यार हमको जन-जन तक बाँटना है। हम जन-जन तक इस पुकार को पहुँचाएँगे कि प्यार वह दौलत है कि प्यार से व्यक्ति बदलता हुआ चला जाता है। वह कहाँ-से-कहाँ पहुँच जाता है। इस सौदे में घाटा नहीं आता है।

गुरुनानक जी एक बार बाजार गए। उनसे कहा गया कि तुम इतने पैसे ले जाओ और सौदा लेकर के आओ और जब वह बाजार गए तो फिर क्या हुआ मालूम है। रास्ते में उनको कुछ व्यक्ति मिल गए, जिनको कि उन चीजों की जरूरत थी। उन्होंने उनको दे दी और घर वापस आ गए। जब घर वापस आए तो पिता ने कहा कि बेटा ले आया सौदा।

उन्होंने कहा कि पिताजी ! आज मैं ऐसे सौदागर के पास पहुँच गया कि बस, आज जो मैंने सौदा किया है वो जिंदगी भर नहीं हो सकता। वो झूमते रहे और पिता बुरा-भला कहते रहे। उन्होंने कहा कि पिताजी मैं तो आज उस भगवान की खेती में बो आया हूँ और जैसा मैं बो आया हूँ, बस, वैसा ही मैं काटूँगा। वो नानक बन गए।

यह मैंने आपको नानक का एक प्रसंग सुनाया, मैंने गुरुजी के प्रसंग सुनाए। मैंने ये भी सुना है कि उन्होंने कसाई से गाय को छुड़वाया था। उन्होंने कहा था कि तू इसको छोड़, बूढ़ी गाय है तो क्या हुआ ? बूढ़ा पिता भी होता है, बूढ़ी माँ भी होती हैं, तो क्या माँ को काट करके खा जाते हैं ? माँ को निकाल देंगे क्या ? छोड़ इसको हम अपने यहाँ बाँध लेंगे और हम इसकी सेवा करेंगे।

यह है सच्चा अध्यात्म

कबूतर का किस्सा तो मैंने अभी सुनाया ही था कि कोई खाने के लिए कबूतर ले जा रहा था तो उन्होंने उसके हाथ से छुड़वाया था और उसे छोड़ना पड़ा। यही हमारा अध्यात्म है। जब यह संसार बनेगा और हमारा राष्ट्र बनेगा तो यह अध्यात्म से ही बनेगा। जब तक कि यह अध्यात्मवादी नहीं होगा और आध्यात्मिक प्रेरणा नहीं पहुँचेगी, तब तक व्यक्ति में बदलाव नहीं आ सकते। बिलकुल नहीं आ सकता चाहे वे कितने भी देवी-देवताओं पर चले जाएँ।

संत एकनाथ की कथा तो तुमने सुनी ही होगी। संत एकनाथ रामेश्वरम् जा रहे थे, तो बीच रास्ते में ही रामेश्वरम् गधे का रूप धारण करके पड़ गए और प्यास से तिलमिलाने लगे। भीतर की जो संकीर्णता थी उसने यह कहा कि हम अपना जल क्यों दें, हम तो लाए थे सेतुबंध रामेश्वरम् के लिए, हम इन्हें क्यों पिला दें ? हमें न तो वहाँ जाना है न स्वर्गलोक में और न मुक्तिलोक में। कौन से स्वर्गलोक में ? क्षीरसागर में।

मुसलमानों में क्या होता है ? जन्नत होती है, जहाँ शराब की नदियाँ बहती हैं, हूर और गुलमा

मिलते हैं और हिंदुओं में क्षीरसागर होता है। क्यों साहब! क्षीरसागर में क्यों जा रहे हैं? उस खीर को यहीं बनाकर खा लें तो? क्या अर्थ है? खीर के लिए ही जा रहे हैं न, कोई अच्छा काम करने तो नहीं जा रहे न? पर माना हम इसलिए जा रहे हैं कि हमें मुक्ति मिलेगी। तो मुक्ति मिल गई? पाप के भागियों को मुक्ति नहीं मिलेगी, आपको किसी भी कीमत पर नहीं मिलेगी। आप मुक्ति का काम करिए, फिर देखिए मुक्ति मिलती है कि नहीं मिलती है।

आप गुरुजी के पदचिह्नों पर चलना, गुरुजी की प्रेरणाओं पर चलना, गुरुजी के मार्गदर्शन पर चलना। गुरुजी ने इतना साहित्य लिखा है, जो इतना प्रेरणादायक है कि आग फूँकने लायक है कि हर दिल को फड़फड़ा देगा, हर दिल को झकझोर देगा और झकझोरना ही हमारा काम है। मरते दम तक हमें यह चिंता नहीं है कि कौन हमारी बुराई कर रहा है, कौन हमारी भलाई कर रहा है।

बड़ाई-बुराई से ऊपर बढ़ें

गुरुजी का उसूल था, उन्होंने कहा कि न हम बड़ाई से ऊँचे उठेंगे और न हम बुराई से गिरेंगे। हमें किसी की चिंता नहीं है कि कौन बुराई करता है। हाँ बुराई करेंगे, अपने-अपने ढंग से कोई बुराई करता है तो कोई समर्थन करता है। तो समर्थन से फूल के लट्टू हो जाएँ और बुराई से मुँह लटका लें, करो न बुराई हम तो आगे बढ़ते हुए चले जाएँगे। हमें बुराई से कुछ नहीं लेना-देना और हमें मरने से भी डर नहीं लगता।

निर्भय जीवन जिएँ

सही बात तो यह है कि हम निर्भय रहें। गुरूजी निर्भय रहे। उन्होंने कहा कि मैं वो व्यक्ति हूँ कि मैंने कांग्रेस आंदोलन में सैकड़ों व्यक्तियों की जानें जाते हुए देखा है। कलकत्ता में मैं अकेला खड़ा रह गया और मेरे सैकड़ों साथी गोली से भून दिए गए। मुझे कहा कि वो तो मरघट में भी रह लिए। वो जंगल में रहे। मरघट और घर, जंगल और घर, बिलकुल उन्हें कहीं रख लीजिए।

मितव्ययी कितने हैं? मैं समझती हूँ कि आज के युग में तो शायद ही कोई इतना मितव्ययी होगा।

अधर्मेणैधते तावत् ततो
भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति
समूलस्तु विनश्यति॥

अर्थात अधर्म के द्वारा कुछ समय तक चतुरता, सफलता तथा लाभ का अनुभव हो सकता है, पर अंततः उससे समूल नाश ही होता है।

सन् सत्तर की बात मैं आपको बताती हूँ, आखिर जहाँ कहीं भी रहे होंगे तो उदर-पूर्ति के लिए कुछ तो चाहिए कि नहीं चाहिए और कुछ तो करते होंगे, पत्ती खाते होंगे, जड़ खाते होंगे, कुछ खाते होंगे। कहीं कोई फल-मूल मिलता होगा, वो खरीदते होंगे। कुछ तो लेते होंगे। फल तो खाते ही नहीं थे, पर कुछ तो शाक-भाजी खरीदते होंगे। यह सुन करके मेरी आँखों में आँसू आ गए।

गुरुदेव का ओज

हम घर में खरच अधिक कर लेते हैं। उन्होंने पंद्रह रुपये महीने में इतनी मितव्ययता के साथ सारे साल-के-साल निकाल दिए और कैसे हो करके आए? कोई लाल टमाटर जैसा, तो लोग पूछने लगे गुरुजी! आपने खाया क्या था?

उन्होंने कहा कि मैंने वो अध्यात्म की शक्ति खाई है और मैंने भक्ति खाई है, मैंने पुरुषार्थ खाया है। उसके बल पर ही ऐसा जो चेहरा आपको दिखाई पड़ रहा है, वो उससे दिखाई पड़ रहा है। उससे नहीं दिखाई पड़ रहा है, जिसको आप समझ रहे हैं कि ये तो खूब मेवा खाते होंगे, दूध पीते होंगे और जाने क्या सल्लम-गल्लम खाते होंगे। इससे ही इनका जो चेहरा है, वो चमकता होगा। नहीं बेटे, उनके चेहरे का जो ओज़ था, जो चमक थी, वो उनकी आध्यात्मिकता का तेज था। कोई भी व्यक्ति उनसे आँख मिला करके बात नहीं कर सकता था। किसी में भी हिम्मत नहीं थी सिवाय मेरे। न कोई आँख मिला करके बात कर सकता था और न कोई बात को छिपा सकता था।

कोई भी व्यक्ति छिपाने की हिम्मत नहीं करता था, उनके सामने एक-एक बात को ऐसे उगलता था कि अपनी कच्ची-पक्की बात सब निकाल करके रख देता था और वो बात को इस तरीके से पी जाते थे कि जाने यह बात हुई ही नहीं थी। क्या मजाल एक कान ने सुना है, तो दूसरा नहीं सुन सकता था।

उनमें इतना धैर्य और उतनी ही गहराई उनके अंदर थी। यही उनको ऊँचा उठाती हुई चली गई, जिनसे आप लोग इतने परिजन जुड़े हुए हैं, जो लाखों—करोड़ों की संख्या में हैं, जिनको हम अपना कहते हैं। शेर का बच्चा शेर होता है, गीदड़ नहीं होता और संत का बच्चा संत के पदचिह्नों पर चलता है।

संत की संतान हैं आप

आप संत की संतान हैं, आप उस माँ की संतान हैं, जो कि उनके पदचिह्नों पर चलते हुए अपने शेष जीवन को उस मंजिल तक ले जा रही है, जहाँ तक वो पहुँच गए। वहाँ हमें भी मिलना है। वो मुझमें मिल गए और मैं उनमें मिल गई। वो मुझमें मिल चुके और मैं भी दिखाई तो पड़ रही हूँ, पर मैं भी उनमें ही मिल गई।

मिलने का अर्थ है—जुड़ जाना और जुड़ जाना है उस फूल के तरीके से, जिसका पहले मैंने उदाहरण दिया था कि फूल जब डाली से टूटता है तो उसे कष्ट सहना पड़ता है, फिर वह भगवान के चरणों पर आता है। उसी फूल को हम पिरो देते हैं तो भगवान के गले का हार बन जाता है।

आप गले का हार बनने की कोशिश करना, जन-जन के गले का हार बनना। भगवान का तो हम बनेंगे ही, जब भगवान के हम कार्य को करेंगे तो भगवान प्रसन्न क्यों नहीं होगा। एक और प्रसंग को सुना करके इस बात को मैं बंद करूँगी।

एक फ़रिश्ता निकल रहा था, कोई एक डायरी भी उसके हाथ में थी। तो एक व्यक्ति ने कहा कि यह क्या ले जा रहे हैं साहब! यह कौन-सी डायरी है? यह वो डायरी है, जिसमें कि किसी ने भगवान का स्मरण किया हो, अल्लाह-ताला का स्मरण किया हो। उसने कहा कि तो आप ज़रा देखिए कि इसमें कोई हमारा नाम है क्या? उन्होंने पलटा और कहा कि नहीं साहब! इसमें तो कुछ नहीं है। वह बहुत दु:खी हुआ।

उसने कहा कि मैं तो नाम जप करते-करते मर गया, पर मेरा नाम ही नहीं है। बहुत परेशान हूँ।

फिर उसी रास्ते से वो फ़रिश्ता निकला। उसने कहा कि अब डायरी किसकी है? उन्होंने कहा कि यह डायरी वो है, जिसको अल्लाह-ताला जपता है। उसने कहा—अच्छा! ऐसी भी डायरी होती है। तो आप दिखाइए न। दिखाया तो पहला नाम उसी का था।

जलाराम बापा का नाम आपने सुना होगा। गुजरात में हैं न, जानते हैं आप। गुजरात के जो बच्चे बैठे हैं वे जानते हैं कि वहाँ जो स्थान है, उनकी वो झोली अभी भी वहाँ रखी हुई है और उसी से भरण-पोषण इतना होता है कि उस झोली का अनाज ही खतम नहीं होता है।

यहाँ वासुदेव सिंह आते थे। एक बार उनके मुँह से यह निकल गया कि माताजी अन्नपूर्णा हैं, इनका भंडार कभी खतम नहीं होगा। तो हम सौ-सौ व्यक्तियों को लेकर के आए, पर इन्होंने मिनटों में सौ-सौ व्यक्तियों को खिला दिया। कहाँ से चमत्कार हो गया? मैंने कहा—साहब! यह चमत्कार नहीं है, ये हमारी अक्ल का खेल है। हम ऐसा फेर बाँधकर रखते हैं कि न मालूम कब कौन-सा व्यक्ति कब आ जाए, तो हम उतना फेर बनाकर बैठते हैं, जिससे हमें कोई देर नहीं लगती है।

बेटे हम बने तो अपने व्यक्तित्व के सहारे बने। आप अपने व्यक्तित्व को घटिया मत बनने देना, बौना मत बनने देना, आप उच्चकोटि का श्रेष्ठ जीवन जीना। श्रेष्ठता की ओर आगे बढ़ना।

घर-घर तक पहुँचे भारतीय संस्कृति

हमको भारतीय संस्कृति को जन-जन तक पहुँचाना है। घर-घर तक पहुँचाना है। उनके पदचिह्नों पर चलिए, तभी आप सच्चे रूप में हमारे लड़के, हमारी लड़कियाँ, हमारे विवेकानंद, हमारी सिस्टर निवेदिताएँ, हमारे अर्जुन, हमारे एकलव्य आप हो सकते हैं।

हम आपके रथ की लगाम तो जरूर सँभाल लेंगे, इसमें दो राय नहीं है। जिस नाव में आप बैठे हैं, वो नाव कभी आपको डूबने नहीं देगी। खुद डूबेगी, तभी डूबेंगे। न वो खुद डूबेगी न आपको डूबने देगी। हर हालत में आपको किनारे से लगाएँगे। आप इसके लिए तैयार हो जाइए।

सामूहिक उपासना में बड़ी शक्ति है। एक समय पर एक मन से एकाग्र होकर की गई उपासना स्वर विज्ञान और शक्ति संचार के हिसाब से अद्‌भुत सामर्थ्य उत्पन्न करती है। इसलिए हम कहते रहते हैं कि गायत्री मंत्र एक साथ बोलिए। एक समय पर एक साथ एक क्रम से की हुई उपासना का वह फल होता है, जैसे कि लोहे के बड़े पुलों पर से होकर जब कभी सिपाही चलते हैं तो कदम मिलाकर लेफ्ट-राइट करने से उन्हें मना कर दिया जाता है; क्योंकि उससे पुल टूटने का खतरा रहता है। आप लोग सामूहिक रूप से एक साथ, एक ही समय, एक-सी ध्वनि, एक ताल-लय, एक नाद का उपयोग कर सकें तो स्वर विद्युत का एक बहुत बड़ा आधार विनिर्मित होगा और वातावरण के संशोधन का प्रयोजन पूरा करेगा।

—परमपूज्य गुरुदेव

हम आपके मल्लाह बनेंगे और आप के रथ के पहिये बनेंगे। कृष्ण तो सारथी बने थे, हम आपके मल्लाह बनेंगे और पहिये बनेंगे। हम आपके जीवन के रथ को चलाएँगे, आपको समर्थ बनाएँगे, आपके मनोबल को बढ़ाएँगे, आपको शक्तिशाली बनाएँगे।

शक्तिशाली माँ के बेटे शक्तिशाली होंगे और शक्तिशाली पिता के शक्तिशाली बच्चे पुरुषार्थी होंगे। तो कृपा करके आप उस ओर ध्यान दीजिए कि आप कायरों की श्रेणी में न आवें, आप भगोड़ों की श्रेणी में न आवें, बल्कि बहादुरों की श्रेणी में आवें, जिस तरीके से ठाकुर होता है।

ठाकुर और ब्राह्मण ये दो मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। क्यों साहब! ठाकुर और ब्राह्मण क्यों अच्छे लगते हैं। इसलिए अच्छे लगते हैं कि ब्राह्मण ज्ञान दान देता है, सेवा करता है, विनम्र होता है। ये कौन होता है? ब्राह्मण होता है। कोई जाति विशेष को ब्राह्मण हमने कभी नहीं माना, हमने तो उस सिद्धांत को, उस ऋषि परंपरा को माना है कि जो ब्राह्मणोचित जीवन जीता है। दूसरा कौन होता है? क्षत्रिय। क्षत्रिय कैसा होता है? वो डरपोक नहीं होता। वो ऐसा नहीं होता है कि डर के मारे चूहे के बिल में घुस जाए।

मेरा निवेदन है कि आप स्वयं ऊँचा उठिए और दूसरों को ऊँचा उठाते हुए चले जाइए। समझदारों को यह नासमझी छोड़नी पड़ेगी और समझदारी पर आना पड़ेगा। पढ़े-लिखे होना बिलकुल अलग बात है और समझदार होना बिलकुल अलग बात है।

बिना पढ़ा-लिखा भी समझदार हो सकता है। पढ़े-लिखे की अपेक्षा बिना पढ़े-लिखे में ज्यादा आध्यात्मिकता होती है; क्योंकि पढ़े-लिखे के पास तर्क-वितर्क ज्यादा रहते हैं। वो तर्क का पुंज है, बस, उससे चाहे जितने तर्क करवा लो, पर उसके अंदर वो भावना नहीं है। बिना पढ़ा-लिखा भावनाओं को जानता है।

शबरी बिना पढ़ी-लिखी थी, मीरा बिना पढ़ी-लिखी थी, सूरदास बिना पढ़े-लिखे थे। वो भक्ति को जानते थे कि भक्ति क्या चीज़ होती है। भक्ति माने है सेवा, सेवा के अलावा कुछ नहीं। सेवा और सुमिरन।

भक्त हरि सुमिरन करता है और अपने भगवान के इशारे पर चलता है। भगवान के नियमों को तोड़ता नहीं है। भगवान के नियमों को तोड़ा नहीं कि बस, वो गया। उसका स्वास्थ्य भी जाएगा, दिमाग से भी जाएगा, सब खोखला होता हुआ चला जाएगा। समाज सेवा तो तब कर पाएगा, जब अपने शरीर को स्वस्थ रख पाएगा, अभी तो शरीर इस लायक नहीं।

दिमाग का, चिंतन का हमारे जीवन पर इतना असर पड़ता है कि जैसा हमारा चिंतन होगा, वैसा ही हमारा चरित्र होगा और जैसा हमारा चरित्र होगा, वैसा ही हमारा व्यवहार होगा। जैसा हमारा व्यवहार होगा, वैसा ही हमारा वातावरण होगा, इसमें दो राय नहीं है।

यहाँ के वातावरण का प्रभाव आपने देखा है न, सब प्रभाव वातावरण का है, जो गुरुजी ने बनाया है। इन शब्दों के साथ मैं आज अपनी बात को समाप्त करती हूँ। **॥ ॐ शांति ॥**

विषाक्तता का विनाश

विषाक्तता का विनाश विश्वव्यापी समस्या है। इसका समाधान विश्व-राष्ट्र की कुंडलिनी जागरण से उत्पन्न अमृत प्रकाश से ही संभव है। तप-साधना के इस महापराक्रम को युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने अपने शरीर के रहते शांतिकुंज में संपन्न किया था। उनकी यह महासाधना वर्ष—1984 ई० से 1987 ई० तक अनवरत तीन वर्षों तक लगातार चली थी। बाद में इसकी प्रक्रिया, प्रभाव व परिणाम बताने के लिए उन्होंने अखण्ड ज्योति पत्रिका का एक विशेषांक लिखा था। जिसे नाम दिया गया था—'**कुंडलिनी जागरण विशेषांक**'। यह विशेष अंक जनवरी, 1987 ई० में प्रकाशित हुआ था। जो ज्ञान व साधना के प्रति जिज्ञासु हैं, वे अभी भी इसके पृष्ठों-पंक्तियों के बिखरे प्रकाश को ग्रहण-धारण व आत्मसात् कर सकते हैं।

इस विशेषांक में एक लेख है—'**नवसृजन के निमित्त साधना पराक्रम**'। इसमें उनके शब्द हैं—'अब यदि परिवर्तन होना है, तो वह तप से अर्जित शक्तिबल पर ही होगा।' इस तप-साधना से उन्होंने कुछ ऐसा ही तपबल अर्जित किया था, जो बाद में विकसित होता गया और अभी भी हो रहा है। इस तीनवर्षीय महातप की ऐसी बहुत सारी बातें थीं, अनेकों ऐसे तथ्य थे; जो उन्होंने लिखे तो नहीं, पर आपस की चर्चा-परिचर्चा में उजागर किए। इसी चर्चा में उन्होंने कहा था—'ऐसी साधना तभी संभव है, जब कोई अपनी शरीर-चेतना को धरती की चेतना से एकाकार कर ले। तब उसका शरीर पृथ्वीतत्त्व प्रधान नहीं, बल्कि स्वयं पृथ्वी हो जाता है। पृथ्वी में होने वाले परिवर्तन उसके शरीर में स्फुरित होने लगते हैं।'

इसी क्रम में उन्होंने बताया था—'जैसे व्यक्तिगत साधना में मूलाधार से सहस्रार तक के चक्र के क्रमिक जागरण, बेधन एवं कुंडलिनी ऊर्जा के उत्थान की भूमिका रहती है; ठीक वैसे ही विश्व-राष्ट्र कुंडलिनी जागरण-साधना में मूलाधार व सहस्रार की भूमिका दक्षिणी ध्रुव व उत्तरी ध्रुव निभाते हैं। इन दोनों ध्रुवों के मध्य जो मेरु प्रकाश है, वही मेरुदंड की भूमिका निभाता है।'

ऐसी साधना तभी संभव है, जब कोई अपनी शरीर-चेतना को धरती की चेतना से एकाकार कर ले। तब उसका शरीर पृथ्वीतत्त्व प्रधान नहीं, बल्कि स्वयं पृथ्वी हो जाता है। पृथ्वी में होने वाले परिवर्तन उसके शरीर में स्फुरित होने लगते हैं।

'जागरण करने के प्रयास में इसकी ऊर्जा का वेग-प्रभाव इतना अधिक तीव्र हो जाता है कि उसे सहन करना अति कठिन या यों कहें लगभग असाध्य, दु:साध्य हो जाता है।' इन वाक्यों को उन्होंने कुछ इस तरह से कहा था, जैसे कि वे अपनी आपबीती सुना रहे हों। चर्चा-परिचर्चा में उन्होंने यह भी कहा था कि 'अभी से लेकर वर्ष 2000 ई० का समय इस प्रक्रिया के सक्रिय होने का है। इसके बाद के 25 वर्षों का समय अर्थात वर्ष 2025 ई० तक का समय इसके विषैले प्रभावों को सहने-सँभालने में चला जाएगा।

उनके शरीर त्यागने के बाद से यानी कि 2 जून, 1990 ई० से लेकर अब तक का समय कैसा और किस तरह से गुजरा है! यह हम सभी ने अनेकों तरह से अनुभव किया है। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी तप-साधना से भले ही इसे कितना ही क्यों न सँभाला हो, फिर भी धरती एवं प्रत्येक धरतीवासी को बहुत कुछ सहना पड़ा है। ये धरतीवासी चाहे पर्वत, नदी, समुद्र हों या वन-वृक्ष-वनस्पति अथवा धरती पर रहने वाले छोटे-छोटे जीव-जंतु हों, या फिर हाथी जैसे विशालकाय पशु। मनुष्य की स्वयं की अनुभूतियाँ भी कुछ ऐसी ही रही हैं। फैलती-बढ़ती इस विषाक्तता के सामने न तो कोई बल काम आया और न कोई युक्ति-बुद्धि-प्रयास काम आया। हाँ, इतना अवश्य हुआ कि सारी दुनिया के मनुष्यों में से स्वयं को शीर्ष, श्रेष्ठ एवं शिखर व स्थानीय समझने वाले मनुष्यों ने इस बीच अनेकों तरह की कहानियाँ अवश्य कह डालीं।

ऐसी कथा कहने वालों में से कुछ विश्व के महान वैज्ञानिक थे, तो कुछ महान भविष्यवक्ता। इन सभी ने अपने डरावने निष्कर्षों से सभी को बहुत डराया। विश्वयुद्ध एवं प्रलय होने जैसी चर्चा-परिचर्चाओं एवं प्रकाशनों से चारों तरफ गरम, विषैली व डरावनी हवाएँ बहती रहीं। नए जमाने के सोशल मीडिया ने इसमें अपनी बढ़-चढ़कर भूमिका निभाई। अभी-भी ऐसी ही अनेकों कथा-कहानियों के अवशेष बचे हैं, जो धीरे-धीरे ध्वस्त व ध्वंस होते हुए ध्वंसावशेष बनकर समाप्त हो जाएँगे। हालाँकि इन सबके बीच कुछ ऐसे भी थे, जो इन डरावनी कहानियों से न तो विचलित हुए, न घबराए और न ही परेशान हुए, क्योंकि उन्हें अपने गुरुवचनों पर सघन श्रद्धा एवं अटल आस्था थी।

इन श्रद्धावानों, आस्थावानों के लिए उन्होंने वर्ष—1984 ई० से वर्ष 1985-86 ई० की अखण्ड ज्योति पत्रिका के अंकों के पृष्ठों पर काफी कुछ लिख दिया था। इसे जिन्होंने पढ़ा हो, वे इसका पुनः स्मरण कर लें। जिन्होंने नहीं पढ़ा हो, वे इसे पढ़ लें। जो यह न करना चाहें, वे अब जान लें कि उन्होंने उसी समय कह दिया था—'जिन्हें आने वाले विनाश का भय हो, वे भयभीत होते रहें। हमने तो शानदार विश्व का सपना देखा है, जो समय आने पर अवश्य साकार होगा। ऐसा विश्व, जिसमें प्रेम-प्रसन्नता एवं उन्नति-प्रगति के बहुत रंग वाले और बहुत तरह की सुगंध से समूचे जगत् व जीवन को अपनी महक से महका देने वाले फूल खिले बिना न रहेंगे।'

तब उन्होंने लिखा था—'घटाएँ घिरेंगी अवश्य, आकाश में कड़कती हुई, भयभीत करने वाली बिजलियाँ चमकेंगी अवश्य; लेकिन उन्हें धरती पर गिरने की, सब कुछ तहस-नहस करने की अनुमति न दी जाएगी। आसमान से घन-गरज करने वाले, अपनी घनघोर-घटाटोप घटाओं से चहुँओर अपने भय से भयभीत करने वाले प्रलयंकारी महामेघ उमड़ेंगे अवश्य, लेकिन उन्हें धरा-धाम पर प्रलय-वर्षा करने की अनुमति कभी न मिलेगी। महाप्रलय के लिए किए जाने वाले अपने महाप्रयास में वे केवल छिट-पुट बूँदाबाँदी ही कर पाएँगे।

अभी तो स्थिति कुछ ऐसी है, जैसे कि देवासुर-सागरमंथन के समय महाविष निकलने पर हुई थी। सभी सोचने लगे थे कि कहाँ तो अमृत निकलने व अमृत पाने की आशा थी और कहाँ यह कालकूट विष निकल आया। तब भी उसका समापन शिव ने किया था, अभी भी उसका समापन शिव ही करेंगे।

धरती हर तरह से सुरक्षित है और वह सुरक्षित रहेगी। इसकी रचना करने वाला विधाता इसे कभी-भी नष्ट न होने देगा; क्योंकि विधाता के विश्व उद्यान में अभी हँसी-खुशी के अनेकों फूल खिलने हैं, अनेकों रंगों की छटा-छिटकनी है।'

उनका तब लिखा गया सत्य अभी भी ज्यों-का-त्यों सच है। विषाक्तता के विश्वव्यापी विनाश का यही समर्थ आधार है। इस प्रसंग में एक संस्मरण का स्मरण हो रहा है। इसे अपने गायत्री परिजनों की नई पीढ़ी को सुना देते हैं। यह बात 1988 ई० के जाड़ों की है। शाम का समय था, धूप ढलने लगी थी। गुरुदेव अपने ऊपर वाले कक्ष के पीछे के आँगन में थे। वे एक चारपाई पर बैठे थे। नीचे उस दिन के अखबारों का ढेर था। संयोग से उस दिन के अखबारों में अनेक वैज्ञानिकों एवं ज्योतिषविज्ञानियों की भविष्यवाणियाँ छपी थीं। इन भविष्यवाणियों को कहने वालों में से कुछ आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि संपन्न व्यक्ति भी थे।

इन सभी तरह-तरह के भविष्यकथनों को पढ़कर जब उन्हें सुनाते हुए कहा गया कि 'आप तो इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य की बात बता रहे हैं, परंतु यहाँ तो विश्व विनाश की चर्चाएँ हैं।' इस पर उन्होंने कहा—"जिसे जो कहना है, कहता रहे; लेकिन जो मैं कह रहा हूँ, वही होगा। क्योंकि विश्व में फैली विषाक्तता का विनाश करने के लिए, उज्ज्वल भविष्य लाने के लिए जो शक्तियाँ सक्रिय हैं, उनके लिए कुछ भी असंभव नहीं है।"

जब उनसे पूछा गया—"ऐसी कैसी शक्ति है, उनके पास ?" तो उन्होंने उत्तर में कहा—"अगर वे चाहें, तो हिमालय हवा में उड़ने लगे। अगर वे चाहें, तो समुद्र सूख जाए। ये सभी परमात्मा के पार्षद हैं। विधाता के वंशज हैं। इन सभी के प्रयास परमात्मा के संकल्प के साथ एकात्म हो गए हैं। मैं जानता हूँ कि जो विषाक्तता अभी फैली है, आगे उससे अनेकों गुना अधिक फैलेगी, लेकिन तब भी धरती सुरक्षित रहेगी। धरतीवासी अपने उज्ज्वल भविष्य के साथ जिएँगे।"

विश्वव्यापी विषाक्तता—विश्व कुंडलिनी का वह महाविष है, जिसे इक्कीसवीं सदी के पहले पच्चीस वर्षों में उभरकर समाप्त होना था। इसे अब तक जितना उभरना था, उभर लिया। अब तो धीरे-धीरे इसके समापन व अवसान का समय आ गया है। चारों ओर फैल चुके इस भयानक कालकूट को विश्व कुंडलिनी का अमृत प्रकाश समाप्त कर देगा। अभी तो स्थिति कुछ ऐसी है, जैसे कि देवासुर-

जिन्हें आने वाले विनाश का भय हो, वे भयभीत होते रहें। हमने तो शानदार विश्व का सपना देखा है, जो समय आने पर अवश्य साकार होगा। ऐसा विश्व, जिसमें प्रेम-प्रसन्नता एवं उन्नति-प्रगति के बहुत रंग वाले और बहुत तरह की सुगंध से समूचे जगत् व जीवन को अपनी महक से महका देने वाले फूल खिले बिना न रहेंगे।

सागरमंथन के समय महाविष निकलने पर हुई थी। सभी सोचने लगे थे कि कहाँ तो अमृत निकलने व अमृत पाने की आशा थी और कहाँ यह कालकूट विष निकल आया। तब भी उसका समापन शिव ने किया था, अभी भी उसका समापन शिव ही करेंगे। अखण्ड ज्योति के प्रारंभिक अंक जिन्होंने देखे हैं, उन्होंने उसमें नियमित प्रकाशित होने वाली पंक्ति—'**सुधा बीज बोने से पहले कालकूट पीना होगा**' पढ़ी होगी। गुरुदेव ने अपने शतवर्षीय तप से इस कालकूट का पान व समापन करके हमें जीवन की वापसी करने वाले सुधा बीज बोने का दायित्व सौंपा है। ❑

अपनों से अपनी बात

अखण्ड ज्योति के सच्चे उत्तराधिकारी बनें

अखण्ड ज्योति इस धरा पर युग-परिवर्तन के लिए अवतरित होने वाली शक्ति का स्रोत है। यह परमपूज्य गुरुदेव की आध्यात्मिक चेतना का प्रथम प्रस्फुटन है। इसमें समष्टि चेतना के संदोहन और व्यष्टि चेतना के संवर्द्धन की असीम ऊर्जा समाहित है। इष्ट के प्रति जिनके भीतर श्रद्धा, समर्पण और विश्वास है, वे इसकी शक्ति-सामर्थ्य और महत्ता को सहज ही अनुभव कर लेते हैं, लेकिन जिस प्रकार बंद आँखों के सामने सूर्य का प्रकाश भी निरर्थक सिद्ध होता है, अंधकार बना ही रहता है; उसी प्रकार अंत:करण के किवाड़ यदि बंद हैं तो इस ऊर्जा का, शक्ति-स्रोत का कहीं कोई आभास तक नहीं मिलता, बस, स्थूलचक्षु से दिखाई पड़ने वाली एक प्रकाश की लौ मात्र का अनुभव हिस्से आता है।

अखण्ड ज्योति के वास्तविक स्वरूप का बोध तो केवल हृदयगुहा के झरोखे से ही संभव है। हृदय जितना प्रेम से, श्रद्धा-समर्पण के भाव से भरता जाएगा उसी अनुपात में इसकी शक्ति, ऊर्जा, संकल्प और सामर्थ्य का प्रकटीकरण जीवन में प्रत्यक्ष होने लगेगा। हम सभी के लिए अखण्ड ज्योति हमारे ऋषियुग्म—परमपूज्य गुरुदेव और परमवंदनीया माताजी का साकार विग्रह है। उनके प्राण, तप और शक्ति का तेज ही इसकी अखंडता का आधार है।

यह विश्वमानवता के कल्याण और नवनिर्माण के लिए प्रज्वलित हुई युगशक्ति का केंद्र है। यही ज्ञान-गंगोत्तरी का नाभिस्थल है। इसके अखंड प्रदीप्त प्रकाश में आध्यात्मिक चेतना का अथाह समुद्र लहराता है।

इसके दर्शन-स्मरण मात्र से अंतस् के कल्मष-कषाय धुलने लगते हैं और सौभाग्य की परतें स्वत: खुलने लगती हैं। पूज्यवर के अनुचरों, परिजनों, साधकों के लिए तो यही मर्म उनके जीवन की सच्चाई है। यहाँ अखण्ड ज्योति के प्रति श्रद्धा की गहनता में ही हम सभी का आध्यात्मिक संबंध परिभाषित होता है।

प्रेम ही विश्वव्यापी विराट परिवार का सृजन कर देने वाली संवेदना को प्रवाहित बनाए हुए है और इसके प्रति समर्पण का स्वरूप उस महान पुरुषार्थ को उत्पन्न करता है, जिससे लोक-कल्याण और आत्मकल्याण के मार्ग पर हमारा मिशन अब तक सफल रहा है और आगे भी लक्ष्यप्राप्ति तक बना रहेगा। श्रद्धा, प्रेम, समर्पण-यही कसौटी है और हम सभी की पात्रता का मानदंड भी।

इस पात्रता को अर्जित करने-धारण करने वाला प्रत्येक जन अखण्ड ज्योति में प्रतिष्ठित आध्यात्मिक सत्ता का सच्चा उत्तराधिकारी है, लेकिन यह सौभाग्य उसी के लिए बन पड़ता है, जिसके हृदय के किवाड़ खुले हैं; क्योंकि सुपात्रता को विकसित करने वाली उक्त तीनों क्षमताओं का प्राकट्य हृदय-क्षेत्र के धरातल पर ही संभव होता है। इसका शिक्षण और प्रेरणाएँ पूज्य गुरुदेव के विचारों में सर्वत्र व्याप्त हैं।

इस कसौटी पर वे भी खरे उतरे हैं, तभी उन्हें अपने आराध्य की सिद्धि मिल पाई है। हमारे लिए भी उन्होंने यही दिशा-निर्देश और आदर्श रखा है। इस अद्वितीय विराट संगठन का रहस्य इन्हीं तीन

को हमें स्वयं धारण करने और सबमें बाँटने-फैलाने का उत्तरदायित्त्व मिला है।

इन दिनों इसी निमित्त समस्त गतिविधियों-अभियानों को केंद्रीभूत कर संचालित करने की प्रक्रिया अपनाई गई है। विभिन्न प्रकार के आयोजनों, यात्राओं, प्रशिक्षणों, साधना-अनुष्ठानों के पीछे यही तथ्य मौजूद है। हम एक क्षण के लिए भी कैसे भूल सकते हैं कि हमारे गुरु ने विश्वमानवता को उज्ज्वल भविष्य का आश्वासन दिया है।

आज इक्कीसवीं सदी के इस तीसरे दशक में जहाँ खड़े हैं वहाँ से जनसाधारण के लिए उज्ज्वल भविष्य की संभावना को देख पाना, समझ पाना असंभव है। हममें से भी जिनकी श्रद्धा, विश्वास और समर्पण की डोर कमजोर है, उनके मनों में भी शंका-कुशंका पनप सकती है। यह सब स्वाभाविक भी है; क्योंकि प्रत्यक्ष में दिखाई पड़ने वाला वर्तमान का परिदृश्य अत्यंत भयानक और निराशाजन्य है।

जाने कितने देश युद्ध को आतुर खड़े हैं, कई युद्ध में उतरते दिख रहे हैं, कोई भ्रष्टाचार तो कोई आतंकवाद से त्रस्त है। उपयोगितावादी, स्वार्थवादी अहं और वर्चस्ववादी भावना व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व समुदाय—सभी स्तरों पर हावी होकर जीवन की दिशा और दशा को विद्रूप कर रही है।

आधुनिकता, भोगवाद और विज्ञान तकनीकी के सम्मिश्रण से पूरे विश्व में एक नई संस्कृति पनप रही है, जो जीवन को पुष्ट करने के स्थान पर खोखला और खाली बना रही है। फिर ऐसी विषमता में भला कोई उज्ज्वल भविष्य की संकल्पना पर विश्वास करे भी तो कैसे? परंतु जो अध्यात्म की शक्ति और आप्तपुरुषों की वाणी की महत्ता से परिचित हैं, वे उनके कथन की सत्यता पर अटूट विश्वास कर अडिग बने रहते हैं।

पूज्यवर के वचन आप्तवचन हैं और वे अध्यात्म के धरातल पर ऋषि संकल्प से निस्सृत हैं। अत: उज्ज्वल भविष्य की संभावना का साकार होना सुनिश्चित माना जाना चाहिए। सूक्ष्म और कारणजगत् में इसकी पृष्ठभूमि पहले ही बन चुकी है। अब बस, आवश्यकता है इसे साकार बनाने वाले धरातल को तैयार करने की।

वह धरातल भी कहीं और नहीं, बल्कि प्रत्येक के भीतर मौजूद हमारा अपना हृदय-क्षेत्र है। हृदय पटल बंद होने से ही मानवता के ऊपर विभीषिकाएँ हावी हुई हैं और उसका जीवन दूभर हो उठा है। इसके खुलते ही समस्त समस्याएँ स्वत: तिरोहित हो जाएँगी।

दृश्य जगत् के रंगमंच पर दिखाई पड़ने वाली नाटक-नौटंकी, पटकथा के बदलते ही समाप्त हो जाएगी और स्वर्णिम भविष्य का अरुणोदय समस्त विश्व-वसुधा पर विकीर्ण दिखाई देगा। दुनिया की कोई भी शक्ति इस ऋषि संकल्प को पूरा होने से रोक नहीं सकती है। जो कोई भी इस ऋषि संकल्प के साथ जुड़ पाए हैं अथवा आगे जुड़ेंगे, वह परम सौभाग्य के द्योतक बनेंगे।

अभी का समय उस ऋषि संकल्प को साकार बनाने वाले धरातल को तैयार करने का है, सभी बंद हृदय के दरवाजों पर दस्तक देने का है। लोगों के हृदयपटल खुले बिना, अंत:करण के जागे बिना यह धरती संवेदनहीन, शांतिहीन, मानवताहीन और अंतत: मानवहीन होने की दिशा में आगे बढ़ते हुए अस्तित्वहीन हो जाएगी। अत: अंत:करण का जागरण ही एकमात्र विकल्प है जहाँ प्रेम, विश्वास, स्नेह, सुख-सौभाग्य, शांति और आनंद का बीजारोपण संभव हो सकेगा।

अखण्ड ज्योति के रूप में जो विरासत हमें पूज्य गुरुदेव ने सौंपी है, उसके प्रति अपने उत्तरदायित्त्व के निर्वाह का शंखनाद हो चुका है, समय की पुकार उठ चुकी है और कारवाँ निकल पड़ा है। भाव संवेदना की गंगोत्तरी से ज्योति

कलश में समाहित होकर युगशक्ति का प्रवाह फूट पड़ा है।

कहीं कोई कोना छूट न जाए, कोई अंत:करण रीता न रह जाए, यह जिम्मेदारी हमारी है। घड़ा यदि औंधा पड़ा है तो फिर बारिश चाहे जितनी भी हो, वह खाली-का-खाली ही रहेगा। बाहर से भले ही गीला दिखाई दे, परंतु उसकी पात्रता और सार्थकता का मूल्य शून्य ही रहेगा। मनुष्य की पात्रता मनुष्यत्व में है, उसकी सार्थकता प्रेम, दया, करुणा, सेवा, समर्पण, त्याग जैसे गुणों से सिद्ध होती है। इनके बिना उसका जीवन खाली घड़े से ज्यादा कुछ नहीं। हमें अपने चारों ओर देखना है कि कहीं कोई खाली न रह जाए।

हरेक तक पहुँचना, उन्हें युगशक्ति के प्रवाह की ओर उन्मुख करना, उनके हृदयपटल की कुंडी खोलने का काम करना है। हरेक हृदय में भाव संवेदना का दीपक जलाने की शक्ति-सामर्थ्य अखण्ड ज्योति में विद्यमान है। हमें उसे सिर्फ हर घर-घर में, हर कोने में, हर बंद हृदय की चौखट तक पहुँचाना है। यही हमारा काम है।

इसी के निमित्त पुकार है कि अपना मोर्चा सँभाल लिया जाए, जहाँ शिथिलता महसूस हो रही हो, उत्साह-जोश धीमा हो उठा हो, निष्क्रियता झलक रही हो, इन्हें तुरंत त्यागें। यह समय अखण्ड ज्योति के सच्चे उत्तराधिकारी होने की पात्रता को सिद्ध करने का है।

पूर्ण सक्रियता, सजगता और कर्मठता के साथ अपनी श्रद्धा, प्रेम और समर्पण की विरासत को अभिव्यक्ति देने का है। अगले दिनों ऋषि संकल्प का यह महाअभियान और ज्यादा तीव्र होने वाला है।

संघर्ष बाहर का नहीं, भीतर का छिड़ने वाला है। हमारी आस्था, विश्वास, श्रद्धा-समर्पण को कड़ी चुनौती मिलने वाली है। अतः ध्यान रहे साधना की, उपासना की डोर ढीली न पड़ने पाए।

वैयक्तिक, सामूहिक और सार्वजनिक साधना, जप, तप, अनुष्ठान की प्रक्रिया यथावत् बनी रहे, इसका भी ध्यान रखना है। जो नए जुड़े हैं, उनका यथासंभव मार्गदर्शन करें, जो नहीं जुड़ पाए हैं, उन्हें जुड़ने के लिए प्रेरित करें। साधना ही हमारी अंतरात्मा का आहार है, भीतर की श्रद्धा, आस्था और विश्वास की दृढ़ता का आधार है।

हम जिस महान लक्ष्य के साथ जुड़े हैं, जिस उद्देश्य से चले हैं, उसके लिए साधना की अनिवार्यता भी है। अखण्ड ज्योति की अखंड दीप्ति के समक्ष अखंड जप-तप की साधना निरंतर चल रही है। इसके आध्यात्मिक वैभव, ऊर्जा और शक्ति से जुड़ने का एकमात्र साधना ही मार्ग है। ❑

रात को बारह बजे कोर्सिका के सेनापति ने एक छोटे-से पदाधिकारी को बुलाकर पूछा—"यदि आपको इसी वक्त दुश्मन के ठिकाने पर भेजा जाए तो इसे आप क्या समझेंगे ?" "अपना परम सौभाग्य! इसलिए कि अपने पौरुष की कसौटी का यही तो सबसे अच्छा समय होगा।"—यह उत्तर देने वाला और कोई नहीं, नैपोलियन बोनापार्ट था, जो कुल 23 वर्ष की आयु में ब्रिगेडियर जनरल बन चुका था। वस्तुतः युवावस्था में पौरुष, बल, पराक्रम, स्फूर्ति अपनी पराकाष्ठा पर होते हैं। जो इसे सुनियोजित करते हैं, वे कम आयुष्य में ही धन्य बनते हैं।

होली आई रे

होली आई होली आई रे, मन में उमंग लाई रे।
अब न राग-द्वेष रहे, सद्भाव शेष रहे।
जीने का ढंग लाई रे, मन में उमंग लाई रे।

हृदय में अनास्था की होलिका जलानी है।
प्रह्लाद-सी भक्ति-भावना बढ़ानी है॥
मन में उल्लास रहे, नवयुग की आस रहे।
ऊर्जा-अंग-अंग लाई रे, मन में उमंग लाई रे।

हिरण्यकशिपु-सी दुष्प्रवृत्ति का संहार हो।
नृसिंह प्रभू की सत्प्रवृत्ति का प्रचार हो॥
सज्जनों का संग रहे, दुष्ट देख दंग रहे।
गुरुभक्ति रंग लाई रे, मन में उमंग लाई रे।

मन में न क्रूरता की कलुष-कालिमा रहे।
परमार्थ भाव की शेष लालिमा रहे॥
गायत्री जाप करें, तन-मन के ताप हरें।
हृदय में तरंग छाई रे, मन में उमंग लाई रे।

दिव्य शांतिकुंज से ज्ञानगंग चल पड़ी।
भावना समर्पण की शिष्यों में उछल पड़ी॥
आओ समयदान करें, और अंशदान करें।
आत्मभाव संग लाई रे, मन में उमंग लाई रे।

—चक्रेश पाण्डेय

युगव्यास वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य

के

समग्र वाङ्मय का क्रमिक परिचय

खंड –3

उपासना-समर्पण-योग

जीवन की अन्यान्य आवश्यकताओं की तरह ही उपासना भी आत्मा की एक अनिवार्य आवश्यकता है । निष्काम भाव से की गई उपासना भगवत् अनुकंपा का पात्र बनाती है, इस योग का सरल बोध मिलेगा।

इस खंड में आप पाएँगे

- उपासना की आवश्यकता क्यों है ?
- उपासना की महत्ता और विधि-व्यवस्था क्या है ?
- उपासना का तत्त्वदर्शन और विज्ञान ।
- उपासना की सार्थकता ।
- सफल उपासना का फलितार्थ क्या है ?
- जप और ध्यान एकदूसरे के पूरक ।

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01 / 02 / 2025
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

छतीसगढ़ प्रांत के गरियाबंद, कुसमुंडा,कोतबा आदि स्थानों में राष्ट्र जागरण अभियान के अंतर्गत आयोजित 108 कुंडीय गायत्री महायज्ञ शृंखला में प्रतिकुलपति देव संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा परिजनों का मार्गदर्शन एवं भावी योजनाओं की घोषणा

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक–मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा–वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा–281003 से प्रकाशित। संपादक–डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 **मोबाइल** — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल–akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को

Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Rishi Chintan